अनुक्रमणिका

विषय-सूची	पृष्ठ-संख्या
१. गुरुतत्त्व	०३
२. ब्रज के गाँवों में श्रीभगवन्नाम-प्रचार	१०
३. वास्तविक भक्ति 'भक्त-शरणागति'	१२
४. ऑस्ट्रेलिया में बालव्यासाचार्या 'श्रीजी' द्वारा उद्बोधन	१५
५. बाल साध्वी मधुवनी जी ने जीता श्रोताओं का दिल	१७
६. बाल साध्वी देवी दया जी की श्रीमद्भागवत कथा	१७
७. आराधनीय 'अवतरित धाम'	१८
८. सेवाराधना का स्वरूप	२०
९. भावमयी भक्ति	२२
१०. प्रेमयोग 'लीला-गान'	२४
११. सर्वात्मसमर्पित सेवक 'श्रीमामा-भांजे'	२६
१२. श्रीराधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा :२०१९ (दिनांक एवं स्थल सूची)	३१

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो |

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,
गह्वरवन बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
(Website :www.maanmandir.org)
(E-mail :ms@maanmandir.org)
mob. : 9927338666, 9837679558

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान -

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रेमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

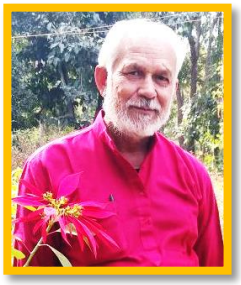

प्रकाशकीय

जीवन से अधिक मूल्यवान क्या हो सकता है परन्तु क्या कोई इसका ज्ञान रखता है ?

हाथ उठाय के कहत हों, कहा बजाऊँ ढोल |
श्वासा बीती जात है, तीन लोक का मोल ||

एक श्वास मात्र ही त्रिलोकी के मूल्य से अधिक है फिर सम्पूर्ण जीवन कितना मूल्यवान होगा ?

जिजीविषे नाहमिहामुया किमन्तर्बहिश्चावृतयेभयोन्या ।
इच्छामि कालेन न यस्य विप्लवस्तस्यात्मलोकावरणस्य मोक्षम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी ८/३/२५)

इस जीवन से भी मूल्यवान कुछ और भी है तभी तो गजराज ने कहा था कि मैं अब जीने की इच्छा नहीं रखता | हर जीव पंच कोशों से आवृत है - अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा अंतिम है 'आनंदमय कोश', जीव इनसे आबद्ध रहता है, मृत्यु के बाद जीव के साथ ये भी जाते हैं, ये कभी मरते नहीं हैं | श्रीभगवान् ने कहा है -

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ (श्रीमद्भगवद्गीताजी १५/८)

जीव जब शरीर छोड़ता है, उसके साथ ही दूसरा शरीर धारण कर लेता है तथा मन, इन्द्रियादि को साथ लेकर ही जाता है | जैसे - वायु गन्धादि को बहाकर ले जाती है, वैसे ही पंचप्राण, मन, बुद्धि एवं दस इन्द्रियाँ आदि सभी जीव के साथ जाते हैं; ये १७ वस्तुयें कभी नष्ट नहीं होतीं |

"पंचप्राण मनोबुद्धिः दसेन्द्रियसमन्वितम् |
अपञ्चीकृतभूतोत्थं सूक्ष्माङ्गं भोगसाधनम् ||"

काल भी जिसका नाश नहीं कर सकता, वह पञ्चकोश नष्ट हो जाए तो उससे बढ़कर कुछ भी नहीं है | सूक्ष्म शरीर का नाश हुआ और हम मुक्त हो गए | कहने का तात्पर्य है कि यदि हमारा सूक्ष्म शरीर नष्ट नहीं हो रहा है तो जीकर हम करेंगे क्या ?

"असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा"

अर्थात् असंगता के शस्त्र से समस्त आसक्तियों को मिटाना होगा, तभी इस शरीर से हम मुक्त हो सकते हैं | गृहत्याग तो जाने कितने लोग करते हैं पर क्या वे वास्तव में असंग हैं, जिसके लिए घर छोड़ा, अंतःकरण को टटोलोगे तो यही पाओगे कि 'असंगता' हममें नहीं है और जब 'असंगता' नहीं आई तो ऐसे जीवन जीने से कोई लाभ नहीं है; यह असंगता सर्वोपरि है, जो 'असंग महापुरुषों' के संग से सुलभ होगी | कहने में संकोच नहीं कि ब्रज के परम विरक्त सन्त पूज्य श्रीरमेशबाबाजी महाराज जैसे असंग महापुरुष ने कितने ही साधकों को इस असंगता के शस्त्र से मुक्त ही नहीं अपितु मुक्ति को भी मुक्ति प्रदान करने वाली 'अहैतुकी भक्ति' से सुसम्पन्न बना दिया |

राधाकांत शास्त्री
व्यवस्थापक, श्रीमान मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

गुरुतत्त्व

प्रवचन कर्ता एवं लेखक – संत श्री बरसानाशरण जी, मानमन्दिर, बरसाना

आध्यात्मिक जगत में **'गुरुतत्त्व'** को लेकर प्रायः बहुत-सी शंकाएँ लोगों के मन में होती हैं, जिनका यथार्थ समाधान नहीं मिल पाता है, जिससे निर्भ्रान्त चित्त से उपासना नहीं हो पाती है | यह लेख इसी दृष्टिकोण से लिखा जा रहा है ताकि जिज्ञासुओं को इन शंकाओं का शास्त्र-सम्मत समुचित समाधन प्राप्त हो सके |

शंकाएँ –

१. क्या गुरु बनाना आवश्यक है या फिर भगवान् को गुरु माना जा सकता है ? यदि हम किसी को गुरु नहीं बनाते हैं, भगवान् को ही गुरु मानते हैं तो हमें आध्यात्मिक ज्ञान की कैसे प्राप्ति होगी ?

२. अगर हम गुरु दीक्षा नहीं लेते हैं तो फिर हम कौन-से मन्त्र का जप करें और क्या गुरुदीक्षा-विहीन मन्त्र फलदायी सिद्ध होगा ? क्या कोई ऐसे संत-भक्त का संग करके भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है जो उसका गुरु नहीं है, केवल उसके प्रति एक सम्बन्ध का भाव है ?

३. सच्चे सद्गुरु के लक्षण क्या हैं अर्थात् किन लक्षणों से सद्गुरु की पहचान करें ?

४. क्या उत्पथगामी (दुराचारी, वैष्णवद्वेषी) गुरु का त्याग किया जा सकता है अर्थात् ऐसे गुरु का त्याग करने में कहीं अपराध तो नहीं होगा, कोई दोष तो नहीं लगेगा ?

.....

प्रथम शंका का समाधान – यद्यपि कहीं-कहीं गुरु करना अत्यंत अनिवार्य बताया गया है किन्तु सच्चे सद्गुरु की प्राप्ति के अभाव में भक्ति-शास्त्रों में भगवान् को भी गुरु-रूप में वरण करने की आज्ञा दी गयी है |

विशुद्ध संत तो गुरु बनने को अन्धकार समझता है, ये बात गुणावतार ब्रह्माजी कह रहे हैं कि दुर्जय माया से प्रेरित लोग मुझे जगद्गुरु मानते हैं –

तस्मै नमो भगवते वासुदेवाय धीमहि |
यन्मायया दुर्जयया मां ब्रुवन्ति जगद्गुरुम् ॥
विलज्जमानया यस्य स्थातुमीक्षापथेऽमुया |
विमोहिता विकत्थन्ते ममाहमिति दुर्धियः ॥

(श्रीमद्भागवतजी २/५/१२,१३)

जबकि मायाधीश श्रीकृष्ण ही सबके गुरु हैं, इसलिए उनको जगद्गुरु कहा जाता है –

वसुदेव *सुतं देवं* कंस चाणूरमर्दनं |
देवकी परमानंदं कृष्णं वंदे जगद्गुरुं ||
पितासि लोकस्य चराचरस्य
त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् | (श्रीमद्भगवद्गीताजी ११/४३)

'श्रीकृष्ण ही इस चराचर जगत के पिता और सबसे बड़े गुरु एवं अति पूजनीय हैं।'

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव |
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥

भगवान् को जो अपना गुरु बना लेता है, वह काल से बच जाता है, श्रीमद्भागवत के तीसरे स्कंध में कपिल भगवान् ने कहा है – **न कर्हिचिन्मत्पराः शान्तरूपे**
नङ्क्ष्यन्ति नो मेऽनिमिषो लेढि हेतिः |
येषामहं प्रिय आत्मा सुतश्च
सखा गुरुः सुहृदो दैवमिष्टम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी ३/२५/३८)

श्रीरामचरितमानस में भगवान् राम ने भी यही कहा कि मुझको ही गुरु मान लो –

गुरु पितु मात बंधु पति देवा |
सब मोहि कहँ जानै दृढ सेवा || (अरण्यकाण्ड -१६)

इसी को सर्वभाव की शरणागति कहते हैं, सारे सम्बन्ध भगवान् से जोड़ लेने चाहिए | भगवान् ने गीताजी में कहा है कि अर्जुन ! तू सर्वभाव से मेरी शरण में आ –

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत |
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १८/६२)

जो सर्वभाव से भगवान् की शरण में जाता है, भगवान् आकर के उसके हृदय में विराजमान हो जाते हैं –

स्वामि सखा *पितु मातु* गुर जिन्ह के सब तुम्ह ताता।
मन मंदिर तिन्ह कें बसहु सीय सहित दोउ भ्रात ॥

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड - १३०)

लक्ष्मणजी की भी भगवान् राम के प्रति ऐसी ही शरणागति थी

गुर पितु मातु न जानउँ काहू |
कहउँ सुभाउ नाथ पतिआहू ॥ (अयोध्याकाण्ड ७२)

"हे नाथ ! मैं जानता नहीं कि माता, पिता, गुरु क्या होता है? मेरे तो सब कुछ आप ही हैं ।"भगवान् शंकर ने भी रामचरितमानस में कहा है कि 'भगवान्' जीव का जैसा हित कर सकते हैं, वैसा न कोई माता-पिता कर सकता और न ही गुरु |

उमा राम सम हित जग माहीं |
गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं ||
सुर नर मुनि सब कै यह रीती |
स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ||

(श्रीरामचरितमानसजी, किष्किन्धाकाण्ड - १२)

माता-पिता, गुरु आदि भी मोह के वशीभूत होकर कुसंग देते हैं | भगवान् से बड़ा हितैषी कोई नहीं है | माता-पिता, स्त्री, पुत्र, भाई-बहन, गुरु आदि भी हितैषी का रूप बनाकर जीव को कुसंग देकर उसका सर्वनाश कर देते हैं किन्तु भगवान् कृपा करते हैं और कुसंगियों को असफलता प्रदान कर अपने शरणागत की रक्षा करते हैं |

गुरु में भी यह स्वार्थ होता है कि मेरा शिष्य मेरे ही पास रहे, मेरी ही सेवा करे | यहाँ तक कि गुरु नाराज होकर शिष्य को बहिष्कृत तक कर देता है, ये विकृतियाँ सम्प्रदायों में भी हैं, उनके विरुद्ध जाने पर वे अपने समाज से निकाल देंगे, बहिष्कृत कर देंगे |

इसी तरह भागवतजी के आठवें स्कन्ध में भी 'गुरु तत्व' के बारे में अधिक स्पष्ट वर्णन किया गया है | यहाँ पर स्वार्थी गुरुओं का खण्डन हो जाता है |

न यत्प्रसादायुतभागलेशमन्ये च देवा गुरवो जनाः स्वयम्
कर्तुं समेताः प्रभवन्ति पुंसस्तमीश्वरं त्वां शरणं प्रपद्ये ॥

(श्रीमद्भागवतजी ८/२४/४९)

सत्यव्रतजी ने कहा है कि कृपा तो भगवान् ही करता है, उनकी कृपा का दस हजारवाँ हिस्सा भी संसार के सारे देवता और गुरु मिलकर नहीं कर सकते अर्थात् कहीं न कहीं स्वार्थ रहता ही है | ऐसी घटनायें प्रायः होती रहती हैं कि अमुक गुरु ने रुष्ट होकर अपने शिष्य का त्याग कर दिया, अपने सम्प्रदाय से निकाल दिया | इसलिए संसार के समस्त गुरु मिलकर भी भगवान् की कृपा का दस हजारवाँ हिस्सा नहीं पा सकते | आगे सत्यव्रत जी कहते हैं कि –

अचक्षुरन्धस्य यथाग्रणीः कृत-
स्तथा जनस्याविदुषोऽबुधो गुरुः ।
त्वमर्कदृक् सर्वदृशां समीक्षणो
वृतो गुरुर्नः स्वगतिं बुभुत्सताम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी ८/२४/५०)

इस संसार में अंधे का गुरु अथवा पथप्रदर्शक अंधा बन जाता है अर्थात् मूर्ख का अज्ञानी गुरु बन जाता है और दोनों ही अन्धकार में चले जाते हैं; इसीलिये मैं आपका गुरु रूप में वरण कर रहा हूँ क्योंकि आप ही सूर्य हो, आप ही दृष्टि हो और सभी दृष्टियों की ईक्षण-दृष्टि भी आप ही हो | भगवान् ही प्रकाश हैं, भगवान् ही नेत्र हैं, उनको गुरु मानने के बाद फिर किसी अन्य गुरु से प्रकाश लेने की आवश्यकता नहीं है |

(पूज्य बाबा महाराज ने भी श्रीराधारानी को ही अपना गुरु माना है और अपने अनुयायियों को भी यही शिक्षा दी कि सर्वभाव से श्रीराधारानी के शरणागत हो जाओ और उन्हीं को अपना गुरु मान लो, राधारानी ही हम सबकी गुरु हैं, श्रीकृष्ण की भी गुरु हैं, गोपियों की भी गुरु हैं) –

राधिकार प्रेम गुरु आमि शिष्य नट |
सदा आमा नाना नृत्ये नाचाय उद्भट || (चैतन्यचरितामृत)

सहाया गुरवः शिष्या भुजिष्या बान्धवाः स्त्रियः ।
सत्यं वदामि ते पार्थ गोप्यः किं मे भवन्ति न ॥ (आदिपुराण)

शुकदेव जी ने राधारानी को ही अपना गुरु माना, श्रीमद्भागवत में मंगलाचरण करते हुए श्रीशुकदेव जी ने सबसे पहले अपने गुरु श्रीराधारानी की ही वंदना की

नमो नमस्तेऽस्त्वृषभाय सात्वतां
विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा
स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥ (श्रीमद्भागवतजी २/४/१४)

अब जो शंका की गयी थी कि यदि हम भगवान् को गुरु बनाते हैं तो हमें आध्यात्मिक ज्ञान कहाँ से प्राप्त होगा, उसके लिये तो कोई न कोई शिक्षागुरु बनाना पड़ेगा तो इस शंका का समाधान यह है कि भगवान् को यदि गुरु मान लोगे तो भगवान् ज्ञान भी देंगे और ऐसा ज्ञान देंगे जो संसार का कोई भी शिक्षागुरु नहीं दे सकता है, इसका प्रमाण कई जगह आया है, भगवान् ने गीता जी में कहा है –

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥ (श्रीगीताजी १०/१०)

जो प्रेमपूर्वक नित्य निरन्तर मेरी उपासना में लगे रहते हैं उन प्रेमपूर्वक भजने वाले भक्तों को मैं वह तत्त्वज्ञान देता हूँ, जिससे वे मुझको सहज में प्राप्त कर लेते हैं |

श्रीमद्भागवत जी में राजा सत्यव्रत जी ने कहा है कि –

जनो जनस्यादिशतेऽसतीं मतिं
यया प्रपद्येत दुरत्ययं तमः ।
त्वं त्वव्ययं ज्ञानममोघमञ्जसा
प्रपद्यते येन जनो निजं पदम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी ८/२४/५१)

ज्यादातर संसार में विवेकहीन लोग गुरु बन जाते हैं, जो समाज में विवेकहीनता का उपदेश करते हैं, संकीर्णता सिखाते हैं कि इतना ही सही है, अन्यत्र सब गलत है, हम ही सही हैं और संसार के लोग गलत हैं | हमने सब समझ लिया, बाकी कोई नहीं समझ सका ।

अपने अपने मत मद भूले, करत आपनी भाई ।
कहयौ हमारो बहुत करत हैं, बहुतनि में प्रभुताई ॥
मैं समुझी सब काहु न समझी, मैं सबहिन समुझाई ।
भोरे भक्त हुते सब तबके, हमतो बहु चतुराई ॥
हमही अति परिपक्व भये, औरनि कै सबै कचाई । (व्यास जी)

ये सब बातें दुष्ट बुद्धि की हैं, इससे शिष्य दुरत्यय अन्धकार में चला जाता है | 'दुरत्यय' उस अँधेरे को कहते हैं जहाँ से मनुष्य कभी निकल नहीं सकेगा | संकीर्ण-बुद्धि (सांप्रदायिक-द्वेष) होने से भक्तापराध करेगा और पतन की ओर अग्रसर होता जाएगा | इसलिए सत्यव्रतजी भगवान् से कहते हैं कि इससे अच्छा है कि हम आपको गुरु मानें क्योंकि आपको गुरु मानने से आप अमोघ ज्ञान देंगे –

त्वं त्वव्ययं ज्ञानममोघमञ्जसा प्रपद्यते येन जनो निजं पदम् ॥

जिससे हमको भगवच्चरणों की प्राप्ति सहज में हो जायेगी |

ये तो भागवत का प्रमाण था, अब गीता का प्रमाण देखिये – अर्जुन को जब मोह हुआ था तो उन्होंने भगवान् से कहा था-

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः ।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥
(श्रीगीताजी २/७)

हे प्रभो ! धर्म के सम्बन्ध में मेरा मन सम्मूढ़ हो गया है, ऐसी स्थिति में मैं क्या करूँ, क्या न करूँ, आप ही मुझे उचित मार्ग बताइये, क्योंकि मैं आपका शिष्य हूँ, आप गुरु बनकर मेरे ऊपर शासन कीजिये क्योंकि मैं आपकी शरण में आया हूँ |

फिर अर्जुन को भगवान् ने दिव्य गीता का ज्ञान दिया और उससे उनके मोह का नाश हुआ, शुद्ध स्मृति प्राप्त हुई –

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।
(श्रीमद्भगवद्गीताजी १८/७३)

अतः इन प्रमाणों से सुस्पष्ट है कि भगवान् शिक्षागुरु बनकर शिक्षा भी देते हैं, भक्त बिल्वमंगलजी ने 'कृष्णकर्णामृत' में कहा था कि हमारे शिक्षागुरु तो मोरमुकुटधारी श्रीकृष्ण ही हैं

***'शिक्षागुरुश्च* भगवाञ्शिखिपिञ्छमौलिः'**

प्रेमदञ्च मे कामदञ्च मे, वेदनञ्च मे वैभवञ्च मे ।
जीवनञ्च में जीवितञ्च मे, दैवतञ्च मे देव नापरम् ॥

हे देव! तुम्ही मेरे प्रेमद हो, तुम्हीं मेरे कामद हो, (गोपीजातीय प्रेमप्रदाता), **<u>तुम्हीं मेरे ज्ञानप्रदाता शिक्षागुरु हो</u>**; तुम्हीं मेरी अखिल सम्पदा, तुम्हीं मेरे जीवन, तुम्हीं मेरे जीवन के हेतु, तुम्हीं मेरे देवता हो, तुम्हें छोड़ मेरा और कोई कुछ नहीं।" इस श्लोक में भी श्रीकृष्ण को शिक्षागुरु कहा गया है।

भगवान् शिक्षा या ज्ञान देकर जीव के हृदयान्धकार को जैसा दूर करते हैं वैसा दुनिया का कोई भी गुरु कर ही नहीं सकता, ये उद्धवजी ने श्रीमद्भागवत के ग्यारहवें स्कंध में कहा है –

नैवोपयन्त्यपचितिं कवयस्तवेश
ब्रह्मायुषापि कृतमृद्धमुदः स्मरन्तः ।
योऽन्तर्बहिस्तनुभृतामशुभं विधुन्व-
न्नाचार्यचैत्यवपुषा स्वगतिं व्यनक्ति ॥
(श्रीमद्भागवतजी ११/२९/६)

"हे ईश ! आप बाहर आचार्य यानि गुरु रूप से और भीतर अंतर्यामी रूप से स्थित होकर देहधारियों के हृदयान्धकार को विनष्ट कर रहे हैं और उनके आगे अपने वास्तविक स्वरूप को प्रकट कर देते हैं तब कोई जीव आपको जान पाता है | इसलिए बड़े-बड़े ब्रह्मज्ञानी भी ब्रह्मा जी के समान आयु पाकर के भी आपके उपकारों का बदला नहीं चुका सकते हैं, बस आपके उपकारों का स्मरण करके आनन्द में अधीर होते रहते हैं |

अस्तु, यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति भगवान् के द्वारा ही होती है, स्वयं ब्रह्मा जी को ज्ञान भगवान् ने ही दिया, ब्रह्मा जी कहीं पढ़ने-लिखने नहीं गए, भगवान् की कृपा से ही उनको बोध प्राप्त हुआ –

***यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं* यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै ।**
तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥

(श्वेताश्वतर. ६/१८)

'तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः'

(श्रीमद्भागवतजी १/१/१/)

गुरु भगवत्तत्व का बोध कराता है, जैसा कि ब्रह्माजी को स्वयं भगवान् ने करा दिया –

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः ।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥

(श्रीमद्भागवतजी २/९/३१)

'मेरा जितना विस्तार है, मेरा जो लक्षण है, मेरे जितने और जैसे रूप,गुण और लीलाएँ हैं— मेरी कृपा से तुम उनका तत्त्व ठीक-ठीक जान जाओगे |'

ध्रुव जी को तत्त्व बोध भगवान् ने ही कराया –

योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्रसुप्तां
संजीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना ।
अन्यांश्च हस्तचरणश्रवणत्वगादीन्
प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ४/९/६)

.....

द्वितीय शंका का समाधान –

दूसरी शंका थी कि गुरुदीक्षाविहीन मन्त्र फलदायी होता है या नहीं अर्थात् गुरु बनाए बिना भजन लगता है कि नहीं; इसका समाधान यह है कि भगवन्नाम ही एकमात्र सबसे बड़ा मन्त्र है **'एको मन्त्रस्य नामानि'** और वह हमेशा फलप्रद होता है, भगवन्नाम लेने में दीक्षा अपेक्षित नहीं है –

दीक्षा पुरश्चर्या विधि अपेक्षा न करे | (चैतन्यचरितामृत)

***नो दीक्षां न च सत्क्रियां न च* पुरश्चर्यां मनागीक्षते**
मन्त्रोऽयं रसनास्पृगेव फलति श्रीकृष्णनामात्मकः ॥
विनैव दीक्षां विप्रेन्द्र पुरश्चर्यां विनैव हि |
विनैव न्यास विधिना जपमात्रेण सिद्धिदः ||

कृष्णनाम लेने में दीक्षा, पुरश्चर्या आदि की अपेक्षा नहीं है | दीक्षा कहते किसको हैं पहले उसे समझना चाहिए, दीक्षा माने केवल इतना ही नहीं कि हमने गुरु बना लिया, मन्त्र ले लिया और हो गयी दीक्षा | दीक्षा की सही परिभाषा है –

दिव्यं भावं यतो दद्यात् क्षिणोति दुरितानि च |
अतो दीक्षेति सा प्रोक्ता सर्वारम्भ विशारदैः || (नारदपांचरात्र)

दिव्य भाव का दान ही दीक्षा है। गुरुदेव दिव्य भावों का दान करते हैं, जिनसे पाप की प्रवृत्ति नष्ट हो जाती है। इन दिव्य भावों के स्थान पर यदि गुरु ने संकीर्ण विचार दे दिये तो समझो विष दे दिया। आजकल भाव के स्थान पर अभाव-दान बहुत हो रहा है।

इसलिए दिव्य भाव जिस संत के पास रहने से प्राप्त हो रहे हों, वे भले ही मन्त्र दीक्षा दें या न दें उन्हें ही गुरु मानकर उनके आश्रय में रहना चाहिए –

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही ।
चितवहिं राम कृपा करि जेही ॥

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड - ६९)

ऐसा विशुद्ध संत भले ही मन्त्र दीक्षा न दे, उसे ही गुरु मानलो क्योंकि एक सिद्धांत है –

कबिरा संगत साधु की ज्यों गंधी का वास ।
जो कछु गंधी दे नहिं तौ भी बास सुबास ॥

अब जो शंका थी कि मन्त्र दीक्षा नहीं मिली, ऐसी स्थिति में हम किस नाम का जप करें तो इसका उत्तर ब्रह्माजी भागवत में देते हैं –

यस्यावतारगुणकर्मविडम्बनानि
नामानि येऽसुविगमे विवशा गृणन्ति ।
ते नैकजन्मशमलं सहसैव हित्वा
संयान्त्यपावृतमृतं तमजं प्रपद्ये ॥ (श्रीमद्भागवतजी ३/९/१५)

भगवान् के सभी नामों में बराबर सामर्थ्य है, तुम्हारी जिस नाम के प्रति रुचि हो, जिस नाम को लेने में मन लगता हो उसी नाम का जप करो, तुम्हें वही नाम भगवान् की प्राप्ति करा देगा | ये ब्रह्मा जी स्वयं कह रहे हैं कि भगवान् के अवतार सम्बन्धी नाम– नन्दनन्दन, देवकीनंदन ...आदि । गुण सम्बन्धी नाम – दीन बंधु, भक्तवत्सल ...आदि । लीला सम्बन्धी नाम – माखन चोर, गिरिधारी....आदि । इनमें से किसी भी नाम का प्राणोत्सर्ग के समय जो मनुष्य उच्चारण करता है वह अनेकानेक जन्मों की संचित अघराशि को छोड़कर अविलम्ब अपावृत सत्य यानि भगवान् को प्राप्त कर लेता है।

आपन्नः संसृतिं घोरां यन्नाम विवशो गृणन् ।
ततः सद्यो विमुच्येत यद्बिभेति स्वयं भयम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/१/१४)

तृतीय शंका का समाधान –

तीसरी जो जिज्ञासा थी कि सच्चा सद्गुरु कौन है, उसके लक्षण क्या हैं, यानि किन लक्षणों से हम उसकी पहचान करें तो सच्चे सद्गुरु के लक्षण श्रीभागवत में नारदजी ने बताए –

स वै प्रियतमश्चात्मा यतो न भयमण्वपि ।
इति वेद स वै विद्वान् यो विद्वान् स गुरुर्हरिः ॥

(श्रीमद्भागवतजी ४/२९/५१)

सच्चा सद्गुरु वही है जो केवल इतना जानता हो कि भगवान् ही जीव के सच्चे प्रियतम हैं और जिनके रास्ते पर चलने में अणुमात्र भी भय नहीं है –

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवातो न विद्यते ।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥

(श्रीगीताजी २/३९)

यानास्थाय नरो राजन् न प्रमाद्येत कर्हिचित् ।
धावन् निमील्य वा नेत्रे न स्खलेन्न पतेदिह ॥

(श्रीमद्भागवतजी ११/२/३५)

जो इतना जानता है वही सच्चा विद्वान् है तथा वही वास्तविक गुरु व भगवान् है |

जेई कृष्ण तत्त्ववेत्ता सेई गुरु हय | (चैतन्यचरितामृत)

ग्यारहवें स्कंध के शुरुआत में भी योगेश्वरों ने माया से पार जाने के लिये गुरु की प्रपत्ति बताई, वहाँ भी उन्होंने सच्चे गुरु के लक्षण बताए हैं –

तस्माद् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम् ।
शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युपशमाश्रयम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ११/३/२१)

जिसके अन्दर तीन चीजें हैं वही सच्चा गुरु है –

(१) भक्तिशास्त्रों का सम्यक् ज्ञान (२) ज्ञान केवल वाणी में न हो अपितु क्रियात्मक जीवन में हो यानि वह आराधना-उपासना परायण हो (३) ब्रह्म में अर्थात् भगवान् में उसकी सारी वृत्तियाँ शान्त हो गयी हों | उसको सच्चा सद्गुरु कहते हैं -

ततोऽनृतं मदं कामं रजो वैरं च पञ्चमम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/१७/३९)

अथैतानि न सेवेत बुभूषुः पुरुषः क्वचित् ।
विशेषतो धर्मशीलो राजा लोकपतिर्गुरुः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/१७/४१)

यदि ऐसा कोई गुरु मिल जाए तो निष्कपट भाव से उसके शरणागत हो जाओ, उसकी सेवा करो और उससे भागवत धर्मों की शिक्षा लो बस इतने से ही तुम भगवान् को अपने वश में कर लोगे -

तत्र भागवतान् धर्मान् शिक्षेद् गुर्वात्मदैवतः ।
अमाययानुवृत्त्या यैस्तुष्येदात्माऽऽत्मदो हरिः

(श्रीमद्भागवतजी ११/३/२२)

ऐसे गुरु में शिष्य की सम्पूर्ण शरणागति होनी चाहिए, ऐसा कोई गुरु मिल जाए तो उसको सबकुछ समर्पित कर दो, यही सच्चे शिष्य का कर्तव्य है, स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है-

एतदेव हि सच्छिष्यैः कर्तव्यं गुरुनिष्कृतम् ।
यद् वै विशुद्धभावेन सर्वार्थात्मार्पणं गुरौ ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/८०/४१)

सच्छिष्य का यही कर्तव्य है कि विशुद्धभाव यानि निष्कपट भाव से वह सब कुछ गुरुदेव को अर्पण कर दे |

शिष्य को ऐसा चाहिए गुरु कँह सरबस देय ।
गुरु को ऐसा चाहिए शिष्य ते कछु नहिं लेय ॥

केवल बाहरी वस्तुओं का ही समर्पण नहीं बल्कि हमारे मन के भीतर जो दुर्विचार उठ रहे हों उन्हें भी गुरु से छिपाए नहीं, गुरु को बता दे, यही निष्कपट भाव है | इस तरह की निष्कपट भाव की गुरु शरणागति से समस्त धर्मों की सिद्धि हो जाती है –

नाहमिज्याप्रजातिभ्यां तपसोपशमेन वा ।
तुष्येयं सर्वभूतात्मा गुरुशुश्रूषया यथा ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/८०/३४)

श्रुतियों में एक बड़ी विचित्र बात लिखी है कि मनुष्य की जितनी शरणागति गुरु में है, उतनी ही भगवान् में होती है उससे ज्यादा नहीं, हम जितने गुरु से निष्कपट हैं उतने ही भगवान् से, ये श्वेताश्वतरोपनिषद में लिखा है –

***यस्य देवे परा* भक्तिर्यथा *देवे* तथा गुरौ ।**
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ॥ (श्वेता. ६/२३)

जितना तुम्हारा गुरु के प्रति निष्कपट भाव होगा, तुम उतने ही चमकते जाओगे और सम्पूर्ण पारमार्थिक विषय हृदय में स्वतः प्रकाशित हो जायेंगे | गीता जी में भी भगवान् ने कहा-

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥
यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव ।
येन भुतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥

(श्रीगीताजी ४/३४,३५)

गुरु में सच्चा प्रणिपात होना चाहिए फिर तुम्हें उनके द्वारा ऐसा ज्ञान मिलेगा, जिससे तुम्हारा सारा मोह भाग जाएगा और तुम उस ज्ञान को प्राप्त करके सम्पूर्ण भूतों को निःशेषभाव से पहले अपने में और पीछे सच्चिदानन्दघन भगवान् में देखोगे। सच्चे गुरु भगवान् से अभिन्न होते हैं, उनको भगवान् के समान ही मानना चाहिए, उनमें मर्त्यबुद्धि नहीं करनी चाहिए–

भक्त भक्ति भगवंत गुरु चतुर नाम वपु एक। (भक्तमाल)
गुरुर्ब्रह्मा ग्रुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः॥ (गर्ग संहिता)
आचार्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित्।
न मर्त्यबुद्धयासूयेत सर्वदेवमयो गुरुः॥
(श्रीमद्भागवतजी ११/१७/२७)

सहजोबाई अनन्य गुरुनिष्ठ भक्त हुयीं हैं। गुरुनिष्ठा सम्बंधित उनका एक प्रसिद्ध पद है जिसमें वे कहती हैं कि मैं राम (भगवान्) का त्याग कर दूँगी परन्तु गुरु का त्याग कभी नहीं कर सकती हूँ-

राम तजूँ पै गुरु न बिसारूँ। गुरु के सम हरि कूँ न निहारूँ॥
हरि ने जन्म दियो जग माहीं। गुरु ने आवागवन छुटाहीं॥
हरि ने पाँच चोर दिए साथा। गुरु ने लई छुटाय अनाथा॥
हरि ने कुटुम्ब जाल में गेरी। गुरु ने काटी ममता बेरी॥
हरि ने रोग-भोग उरझायौ। गुरु जोगी कर सबै छुटायौ॥
हरि ने कर्म भर्म भरमायौ। गुरु ने आतम रूप लखायौ॥
हरि ने मो सूँ आप छिपायौ। गुरु दीपक दै ताहि दिखायौ॥

जो सहजोबाई कह रही हैं, वही बात श्रीमद्भागवत में भी लिखी है कि यदि सच्चा सद्गुरु मिल जाय तो गुरु भक्ति से भी पञ्चकोश या सूक्ष्म शरीर जल जाता है –

यदा रतिर्ब्रह्मणि नैष्ठिकी पुमान्
आचार्यवान् ज्ञानविरागरंहसा।
दहत्यवीर्यं हृदयं जीवकोशं
पञ्चात्मकं योनिमिवोत्थितोऽग्निः॥ (श्रीमद्भागवतजी ४/२२/२६)

जब भगवान् में नैष्ठिकी रति प्राप्त हो जाती है, कैसे होती है, गुरु कृपा से। 'आचार्यवान्' माने 'गुरुभक्तिमान्', जब गुरु की कृपा होती है तब नैष्ठिकी रति प्राप्त होती है, (गुरुद्रोही को भगवत्प्रेम नहीं मिलता है **'आत्मारामा ह्याप्तकामा अकृतज्ञा गुरुद्रुहः'** १०/३२/१९) फिर वह साधक ज्ञान-वैराग्य के वेग से जीवकोश को कमजोर करके बिल्कुल जला देता है और पञ्चकोश जब जल जाते हैं तब जीव मुक्त होता है अर्थात् भगवान् के धाम में जाता है। कोश कहते हैं – **'आच्छादकत्वात इति कोशः'** कोश माने आवरण, ढक्कन या पर्दा; ये प्रत्यगात्मा के पाँच कोशों का आवरण है। पञ्चकोशों के नाम हैं – **अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय।**

हम अनादिकाल से जाने कितनी बार मरे होंगे, जले होंगे लेकिन ये आवरण (सूक्ष्म शरीर-पञ्चकोश) आज तक नहीं हटा क्योंकि चिता की अग्नि, काल या प्रलय उस आवरण को नहीं हटा सकते अर्थात पञ्च कोश या लिंग शरीर इनसे नष्ट नहीं होता, वह निष्काम भक्ति से ही जलता है।

अनिमित्ता भागवती भक्तिः सिद्धेर्गरीयसी।
जरयत्याशु या कोशं निगीर्णमनलो यथा॥
(श्रीमद्भागवतजी ३/२५/३३)

'भगवान की जो अहैतुकी भक्ति है। यह मुक्ति से भी बढ़कर है, क्योंकि जठरानल जिस प्रकार से खाए हुए अन्न को पचाता है, उसी प्रकार यह भी कर्मसंस्कारों के भण्डार स्वरूप लिंग शरीर को तत्काल भस्म कर देती है।'

.....

चतुर्थ शंका का समाधान –

चौथी शंका थी कि क्या उत्पथगामी (भोगी, दुराचारी, वैष्णवद्वेषी) गुरु का त्याग किया जा सकता है, उसको छोड़ने में कहीं कोई दोष तो नहीं लगेगा, तो इसका समाधान यह है कि ऐसे गुरु का त्याग करने से कोई अपराध नहीं लगता है, उसका तो त्याग कर ही देना चाहिए –

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः।
उत्पथे वर्तमानस्य परित्यागो विधीयते॥

जो माया में लिप्त या अभिमानी है, कार्य-अकार्य का जिसे ज्ञान नहीं है, संग्रह-भोगादि में लगा, उत्पथगामी (दुराचारी) या वैष्णवद्वेषी है, ऐसा गुरु त्याज्य है।

ये श्लोक कई पुराणों में आया है, चार जगह तो केवल महाभारत में ही आया है – **शान्तिपर्व** – १. राजा मरुत्त ने कहा
२. भारद्वाज कणिक ने राजा शत्रुंजय से कहा
आदिपर्व – ३. कणिक विप्र ने ध्रतराष्ट्र से कहा
उद्योगपर्व – ४. भीष्म जी ने परशुराम जी से कहा
स्कन्दपुराण में – याज्ञवल्क्य ने शाकल्य ऋषि से कहा
वाल्मीकि रामायण में – लक्ष्मण जी ने कहा

गोस्वामी तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में लिखा है –

जाके प्रिय न राम–बैदेही।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषण बंधु, भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो कंत ब्रज-बनितन्हि, भये मुद-मंगलकारी

नाते नेह रामके मनियत, सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं॥

जीव गोस्वामी जी ने कहा है -

'वैष्णव द्वेषी गुरुः स्यात् त्याज्यः एव।'

अगर गुरु वैष्णव द्वेषी है तो उसको छोड़ दो।

श्रीमद्भागवत में ऋषभ भगवान् ने कहा है –

गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात्
पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात्।
दैवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्या-
न्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम्॥ (श्रीमद्भागवतजी ५/५/१८)

वह गुरु, गुरु नहीं है; वह स्वजन, स्वजन नहीं हैं; वह माँ, माँ नहीं है; वह पिता, पिता नहीं है; वह दैव, दैव नहीं है; वह पति, पति नहीं है; जो मृत्यु से छूटने का रास्ता नहीं बताता है। जो भगवान् की शरणागति न बतावे, उसको छोड़ दो; यह भगवान् की आज्ञा है।

जरउ सो संपति सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो राम पद करै न सहस सहाइ॥(अयो. १८५)

उसको तुरन्त छोड़ दो, जो भक्ति में बाधा देता हो। जो भक्ति में सहायता नहीं देता बल्कि बाधा देता है, चाहे वह सम्पत्ति है उसको छोड़ दो, उस घर को छोड़ दो, उन सुखों में आग लगा दो जिनसे भक्ति में बाधा आ रही हो, उन माँ-बाप, भाई-बन्धु को छोड़ दो जो बाधा देते हों।

ब्रह्मवैवर्तपुराण में नारद जी ने ब्रह्मा जी से कहा था –

स किं गुरुः स किं तातः स किं स्वामी स किं सुतः।
यः श्रीकृष्णपदाम्भोजे भक्तिं दातुमनीश्वरः॥ (ब्रह्मखण्ड ८/६१)

'वह कैसा गुरु, कैसा पिता, कैसा स्वामी, और कैसा पुत्र है, जो भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों की भक्ति देने में समर्थ न हो।'

गर्गसंहिता में भी इसी भाव का श्लोक आया है –

स किं गुरुः स किं तातः स किं पुत्र स किं सखा।
स किं राजा स किं बंधुर्न दद्याद्यो हरौ मतिम्॥ (अश्वमेधखण्ड)

उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि जो भगवान् की भक्ति न सिखाए, जो उत्पथगामी है ऐसे गुरु का त्याग कर देना चाहिए, आज समाज में अधिकांश ऐसे ही गुरुओं की भरमार है, जो भोगैश्वर्य में प्रसक्त हैं, वे आत्मकल्याण भी नहीं कर सकते, दूसरे का कल्याण क्या करेंगे, एक सिद्धान्त है –**'तीर्णास्तारयन्ति'** – जो स्वयं तर जाता है, वही दूसरे को तार पाता है किन्तु जो स्वयं तरने में असमर्थ है वह दूसरे को क्या तारेगा – **'स्वयं तरितुमक्षमः कथंपरांस्तारयेत्'**

वर्तमान समय में अधिकांश वित्तापहारक गुरु ही मिलते हैं, जो केवल शिष्य के धन का ही हरण करते हैं, उसके हृदय के शोक-संताप को नहीं –

गुरवो बहवः सन्ति शिष्य वित्तापहारकाः।
क्वचित्तु तत्र दृश्यन्ते शिष्यचित्तापहारकाः॥

गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस जी में कहा –

हरइ शिष्य धन शोक न हरई। सो गुरु घोर नरक महं परई॥

भगवद रसिक जी ने कहा –

वेषधारी हरि के उर साले।
गुरु भयो घर घर में डोले नाम धनी को बेचै।
परमारथ स्वप्नें नहिं जानै पैसन ही को खैंचे॥

बिहारिनदेव जी ने कहा –

पैसन के भूखे फिरें परमारथ के दान।
श्रीबिहारीदास धनधर्म बिन सो गुरु दरिद्री जान॥
जो गुरु करै शिष्य की आस। श्याम भजन ते भया उदास॥

रामचरितमानस में कौशिल्याजी ने अयोध्याकाण्ड में कहा –

सुनिअ सुधा देखिअहिं गरल सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक मानस सकृत मराल॥

कबीरदास जी ने कहा –

यारो कोई सफा न देखा दिल का।
लप-लप बातें फक-फक कपड़ा, भरा गुरुर जहन का॥
बिल्ली देखी बगुला देखा, साँप जो देखा बिल का।
ऊपर ऊपर सुन्दर लागे, अन्दर काले दिल का॥
काजी देखा मुल्ला देखा, पण्डित देखा छल का।
औरन को बैकुण्ठ बतावै, आप नरक में सटका॥

स्वामी रामानुजाचार्य जी ने प्रपन्नामृत में यहाँ तक कहा कि यदि कोई आचार्य परम्परा में भी है, वैष्णव चिन्ह धारण करता है, किन्तु विषयातुर है तो उसको भी गुरु नहीं बनाओ, उसका संग नहीं करो –

श्रीवैष्णवानां चिन्हानि धृत्वापि विषयातुरैः।
तैः सार्द्धं वंचकजनैः सहवासं न कारयेत्॥ (प्रपन्नामृत)

अगर ऐसे गुरुओं का संग करोगे तो यही परिणाम होगा –

गुर शिष्य अंध बधिर कहि लेखा। एक न सुनइ एक नहिं देखा॥ (उ.का.९९)

गुरुजी तो स्वयं अंधे हैं, वो खुद ही खड्डे में जा रहे हैं और कहते हैं कि हमारे पीछे चले आओ, शिष्य के पथ-प्रदर्शक बनकर उसको भी खड्डे में गिरा देते हैं।

लोभी गुरु लालची चेला, दोनों नरक में ठेलम-ठेला।

सच्चा सद्गुरु वही है जो केवल इतना जानता हो कि भगवान् ही जीव के सच्चे प्रियतम है और जिनके रास्ते पर चलने में अणुमात्र भी भय नहीं है।

ब्रज के गाँवों में श्रीभगवन्नाम-प्रचार

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी गौरी जी, मानमन्दिर, बरसाना

सद्गुरुदेव परम पूज्य श्रीरमेशबाबामहाराजजी की प्रेरणा से मानमंदिर के संतजन ब्रज के गाँवों में भगवन्नाम-प्रचार हेतु भ्रमण कर रहे हैं, उन्होंने ब्रज की कामाँ तहसील के समस्त गाँवों में प्रचार का कार्य पूरा कर लिया है और अब वे शेष ब्रज के गाँवों में प्रचार कर रहे हैं | श्रीबाबामहाराज का कहना है कि ब्रज के किसी भी गाँव को नहीं छोड़ना है, सारे ब्रजमण्डल को भगवन्नाम के रंग में सराबोर कर दो | श्रीबाबामहाराज की आज्ञा का पालन करने हेतु मानमंदिर के संत अथक प्रयास करते हुये कठोर परिश्रम कर रहे हैं | इस समय संतों के साथ ही मानमंदिर गुरुकुल के बालक भी प्रचार कार्यक्रम में सहयोग कर रहे हैं | प्रचण्ड ग्रीष्म ऋतु में ब्रह्ममुहूर्त में ही मानमंदिर के साधु और गुरुकुल के बालक संत श्रीब्रजकिशोरदासजी के नेतृत्व में गाँवों की ओर रवाना हो जाते हैं | जिन गाँवों में प्रभात फेरियाँ बंद हो चुकी थीं, इन संतों के अथक प्रयास से पुनः अत्यन्त उत्साह के साथ बड़ी संख्या में ब्रजवासी प्रभात फेरी में जाने लगे हैं और जिन गाँवों में अल्प संख्या में ब्रजवासी प्रभात फेरी में जाते थे, वहाँ अब विशाल संख्या के साथ प्रभात फेरी में जाना आरम्भ हो गया है | संतों के साथ ही मानमन्दिर गुरुकुल के छोटे-छोटे बालक भी ब्रजवासियों को अपने प्रवचन में शास्त्रों के प्रमाण के सहित भगवन्नाम की महिमा सुनाते हैं, ब्रजवासियों से प्रतिदिन प्रभात फेरी में जाने का अनुरोध करते हैं |

बालकों की हृदयस्पर्शी भक्ति-ज्ञान समन्वित वाणी को सुनकर ब्रजवासीजन भाव-विभोर हो जाते हैं और अगले दिन से ही विशाल संख्या में प्रभात फेरी में जाने का संकल्प ले लेते हैं | मानमन्दिर के संत और गुरुकुल के बालक भीषण गर्मी में भी गाँव की गलियों में संकीर्तन करते हुए परिभ्रमण करते हैं और स्थान-स्थान पर ब्रज की प्राचीन संस्कृति, ब्रज की रसमयी उपासना पर आधारित ब्रज के रसिया का गायन करते तथा नृत्य करते हैं, उनके रसमय गीत और नृत्य को देख-सुनकर ब्रजवासी अपने को रोक नहीं पाते हैं और स्वयं भी उनके साथ संकीर्तन व नृत्य करते हैं | मानमन्दिर के इन संतों द्वारा इस प्रकार का ब्रजरसमय (नृत्य-गानमय) प्रचार ब्रज के समस्त गाँवों में चल रहा है, सभी गाँवों में विशाल संख्या में ब्रजवासी पुरुष और स्त्रियाँ एकत्रित होकर कीर्तन करते व नृत्य करते हैं, ब्रज की जो प्राचीन संस्कृति कलिकाल के भयावह कुठारागात से लुप्त होती जा रही थी, नष्ट होने के कगार पर आ गयी थी, आज मानमन्दिर के संतों और बालकों के सत्प्रयास से पुनः अपने स्वरूप को प्राप्त हो रही है | गाँव-गाँव में ब्रजवासी इन संतों का अत्यधिक प्रेम से स्वागत करते हैं, उन्हें मधुकरी (भिक्षा का पवित्र अन्न) प्रदान करते हैं | कलियुग का आज ऐसा तांडव नृत्य हो रहा है कि धर्म व भक्ति के प्रचारक सुविधापूर्ण शहरों में, धनी लोगों में ही प्रचार करते हैं, सुविधाहीन गरीब गाँवों में कोई प्रचारक या कथावाचक प्रचार करना नहीं चाहते क्योंकि वहाँ उन्हें कोई सुविधा नहीं मिलती और न ही धन का सहयोग मिल पाता है किन्तु मानमन्दिर के प्रचारक धन का लोभ और सुविधाओं का मोह छोड़कर ब्रज और भारत के गरीब गाँवों में प्रचार कर एक विलक्षण आदर्श उपस्थित कर रहे हैं | इस प्रभात फेरी कार्यक्रम के जनक श्रीबाबामहाराज जब श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में जाया करते थे, तभी से सम्पूर्ण ब्रज चौरासी कोस में ब्रजवासियों को प्रभात फेरी में जाने के लिए अपने सदुपदेश द्वारा मार्गदर्शन दिया करते थे,उनके उद्बोधन का ऐसा प्रभाव पड़ता था कि अगले दिन से ही प्रातःकाल ४-५ बजे से ही ब्रजवासी बहुत बड़ी संख्या में प्रभात फेरी में

जाने लगते थे | ब्रजमण्डल के हजारों गाँवों में पूज्यश्री के द्वारा इस मंगलकारी कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया | प्रभात फेरी कार्यक्रम को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए महाराजश्री के द्वारा हजारों गाँवों के ब्रजवासियों को निःशुल्क माइक और ढोलकों का वितरण किया गया | प्रभातफेरी कार्यक्रम को सर्वप्रथम भारतवर्ष में कलिपावनावतारी श्री चैतन्य महाप्रभु के द्वारा नगर कीर्तन के माध्यम से आरम्भ किया गया था | उस समय सम्पूर्ण भारत मुस्लिम शासकों के आधीन था | अत्याचारी क्रूर यवन बादशाह हिन्दू जनता पर बर्बर अत्याचार कर रहे थे, उन्हें जबरन मुसलमान बना रहे थे, ऐसे भयंकर समय में भगवान् श्रीकृष्ण ही चैतन्य महाप्रभु के रूप में बंगाल में अवतरित हुए और उन्होंने नगर-कीर्तन के माध्यम से सम्पूर्ण बंग देश को भगवन्नाम के रंग में रंग दिया | बंगाल के पश्चात् सम्पूर्ण भारतवर्ष में भी उन्होंने नगर-संकीर्तन के माध्यम से भगवत्प्रेम की सरिता प्रवाहित की | गौरांग महाप्रभु से प्रेरणा लेकर ही उनके इस नगर-कीर्तन अभियान को भारतव्यापी बनाने का कार्य आधुनिक काल में पूज्यश्रीबाबा महाराज ने आरम्भ किया है | उनकी प्रेरणा से मानमन्दिर के संतों और साध्वियों के द्वारा ब्रज तथा भारत के अनेकों गाँवों में प्रभातफेरी कार्यक्रम शुरू किये गए हैं, उनके प्रयासों से भारत के लगभग ३५ हजार से अधिक गाँवों में प्रभातफेरियों का शुभारम्भ हो गया है | आज दुनिया में चारों ओर कलियुग का प्रचंड प्रकोप है, इसके प्रभाव से संसार में चारों ओर पाप-अपराध और भीषण समस्याएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं | हमारे शास्त्रों में कलियुग की इस भयंकर स्थिति और इसके निराकरण का उपाय पहले ही बताया जा चुका है | श्रीमद्भागवत के द्वादश स्कन्ध में शुकदेवजी ने राजा परीक्षित के समक्ष कलियुग के दोषों का विस्तार से वर्णन किया, जिसे सुनकर परीक्षित जी अत्यधिक चिंतित हुए और उन्होंने कलियुग की समस्याओं के निदान के बारे में प्रश्न किया तो शुकदेवजी ने श्रीमद्भागवतजी के कई श्लोकों में विस्तार से भगवन्नाम-संकीर्तन को ही कलिकाल की प्रजा के कल्याण का एकमात्र उपाय बताया, जिसमें उन्होंने कहा है –

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १२ /३ /५१)

यद्यपि यह कलियुग दोषों का खजाना है परन्तु फिर भी इसमें एक बहुत बड़ा गुण यही है कि इस युग में केवल भगवान् श्रीकृष्ण का संकीर्तन करने मात्र से ही सारी आसक्तियाँ छूट जाती हैं और भगवान् की प्राप्ति हो जाती है | नाम जप करने से केवल जपने वाले का ही कल्याण होता है, अन्य लोगों का कल्याण नहीं होता है, इसके विपरीत कीर्तन करने से अनेकों जीवों का कल्याण होता है परन्तु एक स्थान पर बैठकर कीर्तन करने से जहाँ पर कीर्तन होता है और जहाँ तक इसकी ध्वनि जाती है, उतने ही जीवों का कल्याण होता है जबकि प्रभात फेरी के माध्यम से पूरे गाँव या पूरे इलाके में कीर्तन करते हुए भ्रमण किया जाता है तो इसके माध्यम से सारे गाँव के चर-अचर समस्त जीव भगवन्नाम सुनते हैं अतः प्रभात फेरी के द्वारा सम्पूर्ण गाँव, क्षेत्र का सहज ही कल्याण हो जाता है | इसलिए कलिकाल में जनकल्याण के लिए प्रभात फेरी कार्यक्रम को सारे विश्व में फ़ैलाने की आवश्यकता है और श्रीबाबा महाराज का यही संदेश है तथा उनके संदेश को मानमन्दिर के संत कठोर तपश्चर्या के द्वारा प्रभात फेरी अभियान के माध्यम से सम्पूर्ण ब्रजमंडल में प्रचारित करने में लगे हुए हैं |

'श्रीमानमंदिर-पत्रिका' के समस्त पाठकजनों से भी करबद्ध निवेदन है कि आप लोग भी अपने आवास-स्थल, आश्रमों, गाँव-नगरों व आस-पास के क्षेत्रों में 'हरिनाम-संकीर्तन-प्रभात फेरी' करने के लिए जन-जन को जागरूक करें |

वास्तविक भक्ति 'भक्त-शरणागति'

ब्रजबालिका मुरलिकाजी की कथा (अमेरिका) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी नवीनाश्री जी, मानमन्दिर, बरसाना

साध्वी मुरलिकाजी के शब्दों में – "सच बात तो ये है कि किसी महापुरुष के जीवन-चरित्र को जानना तब तक असंभव है, जब तक स्वयं भगवान् कृपा न कर दें | जब तक स्वयं भगवान् उनका उत्कर्ष, उनका प्रभाव और उनकी गौरवमयी गरिमा संसार में प्रकट न कर दें, तब तक महापुरुषों को जानना बहुत कठिन है | उन्ही में से हमारे पूज्य गुरुदेव श्रीरमेशबाबाजी महाराज विगत पैंसठ वर्षों से ब्रजवास कर रहे हैं | हम तो आप सबको आमंत्रित करते हैं कि आप लोग कभी बरसाना आइये क्योंकि ऐसी लोकोत्तर विभूतियों का दर्शन अवश्य करना चाहिए | भारत एक ऐसी धरती है जिसमें महापुरुषों की श्रृंखला कभी टूटती नहीं है | भारत भक्तरत्नगर्भा भूमि है, भारत की कोख से भक्तरत्न हमेशा प्रकट होते रहते हैं, कभी कोई किसी प्रांत को उद्भासित (प्रकाशित) करते हैं तो कभी कोई भक्त किसी अन्य क्षेत्र को ज्ञान-भक्ति का प्रकाश देते रहते हैं | मीराबाई ने राजस्थान को आलोकित किया, संत ज्ञानेश्वर ने महाराष्ट्र की भूमि को परम पावन किया | चैतन्य महाप्रभु ने गौड़ प्रांत को भगवन्नाम से गुंजायमान किया | नरसी जी ने गुजरात की भूमि को भक्तिरस से सराबोर किया | ये चर्चा इसलिए भी हमने की क्योंकि जितने भी साधनमार्ग हैं, चाहे आपको भगवान् के नाम के माहात्म्य को जानना है, चाहे आपको भगवान् के धाम के माहात्म्य को जानना है, चाहे आपको भगवान् के भक्त की महिमा को जानना है, चाहे आपको भक्ति-शास्त्रों की महिमा जानना है, चाहे उन भक्ति-शास्त्रों के सिद्धान्तों की महिमा जानना है तो इसके लिए भक्तों का मार्गदर्शन, उनका सानिध्य बहुत आवश्यक है | नाम की महिमा अगर जाननी है तो जब तक नाम-निष्ठ किसी भक्त के चरित्र का आश्रय नहीं लेंगे तब तक नाम की महिमा जीवन भर स्वयं पढ़ने-लिखने से समझ में नहीं आएगी | भगवान् के धाम की महिमा को अगर जानना है तो जब तक किसी धामनिष्ठ महापुरुष के जीवन-चरित्र को हम सुनेंगे नहीं, समझेंगे नहीं तब तक धाम की महिमा केवल ग्रन्थ पढ़ने से कभी समझ में नहीं आएगी | भक्ति की महिमा समझना है तो भक्ति के सिद्धांतों को जिन्होंने अपने जीवन में क्रियात्मक रूप से लागू किया, ऐसे महाभागवतों का चरित्र जब तक हम सुनेंगे और कहेंगे नहीं तब तक भक्तियोग केवल शास्त्र की भाषा से समझा जाने वाला नहीं है | इसी तरह से अगर भगवान् के भक्त की महिमा को समझना है तो किसी न किसी श्रेष्ठ भक्त के चरणों का जब तक हम आश्रय नहीं लेंगे और बहुत सूक्ष्मता-गहनता से उनके जीवन को निरखेंगे-परखेंगे नहीं तब तक भक्तों की जीवन शैली को समझना शास्त्रों के आश्रय से संभव नहीं है | भक्तमालजी में प्रियादासजी का एक बहुत श्रेष्ठ कवित्त है-

बड़े भक्तिमान निशदिन गुणगान करें,
हरें जग पाप हियो जान भरपूर है |

देखो, कितनी सुन्दर बात भक्तमालजी में लिखी है कि बड़े भक्तिमान अर्थात् कोई इतना बड़ा भक्त है कि निशदिन प्रभु का गुणगान करता है, रात-दिन जिसकी जिह्वा पर कृष्ण नाम चढ़ा है, हमारी स्थिति कोई ऐसी है क्या ? पर मान लो यदि हमारे जीवन में कोई ऐसा व्यक्ति भी आ जाये जिसकी जिह्वा पर चौबीस घंटे भगवन्नाम चढ़ा हो, हृदय नाम से भरपूर है, ऐसा नहीं कि केवल बाह्य रूप से ही नाम ले रहा है बल्कि हृदय में नाम के प्रति प्रेम भी है, ऐसी स्थिति होने पर भी भक्तमाल में लिखा है -

"तऊ दुराराध्य कहो कैसे के आराधि सकै"

निरन्तर जिसकी जिह्वा द्वारा कृष्णनाम का उच्चारण हो रहा है, जिसके हृदय में प्रेम है और जिसने भक्त व भगवान् की महिमा को अच्छी तरह से समझ लिया है तथा जो जगत-प्रपंच से दूर रहने का प्रयास भी करता है, फिर भी उसके हृदय में भक्ति ठीक रूप से प्रकट हो गई है कि नहीं हुई है, इसके बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता | कहने का अभिप्राय यह है कि चौबीस घंटे नाम जप का नाम भी भक्ति नहीं है, इसका मतलब है कि संत-भगवंत की महिमा को जानने को भी हम पूर्ण भक्ति नहीं कह सकते हैं, संसार से दूर रहना भी भक्ति नहीं है | इसके अतिरिक्त प्रियादासजी एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात लिख रहे हैं | "शोभित तिलक भाल" मस्तक पर बढ़िया ऊर्ध्वपुण्ड वैष्णव तिलक है | "माल उर राजै" गले में बढ़िया तुलसी की माला भी पहन रखी है, उत्तम साधु-वेश भी धारण कर रखा है किन्तु "बिना भक्तमाल भक्तिरूप अति दूर है" यदि उस साधक के जीवन में किसी श्रेष्ठ महापुरुष का आश्रय नहीं है तो उसके लिए भक्ति अत्यंत दूर है | तिलक का नाम भक्ति नहीं है, कंठी का नाम भक्ति नहीं है, जगत-प्रपंच से बचने का नाम 'भक्ति' नहीं है, 'भक्ति' का अर्थ चौबीस घंटे नाम जप करना नहीं है, भक्ति का तात्पर्य है – 'किसी श्रेष्ठ भक्त का आश्रय |' जीवन में किसी महाभागवत का आश्रय होना आवश्यक है | यदि महाभागवतजनों का आश्रय नहीं होगा तो नाम-जप भी 'मद' पैदा कर देगा | भगवान् और उनके भक्तों की महिमा को यदि ठीक ढंग से नहीं जाना तो शास्त्र के वाक्य भी 'मद' उत्पन्न कर देंगे | जिन साधकों के जीवन में भक्तों का, महापुरुषों का आश्रय नहीं होता है, भक्तों से प्रेम नहीं होता है, उनके जीवन में मनमानापन, उच्छृंखलता व स्वच्छंदता (स्वतंत्रता) आ जाती है, वे ऐसा सोचते हैं कि हमने जो कहा वही ठीक है, हमने जो किया वही ठीक है | वस्तुतः भक्तों, संत-महापुरुषों के आश्रय के बिना न तो भगवन्नाम में प्रीति हो सकती है, न धाम की महिमा को ठीक से जाना जा सकता है और न ही भक्ति को ठीक से समझ सकते हैं | विशुद्ध भक्तों के आश्रय के बिना धाम की भक्ति को जानना, नाम की भक्ति को जानना, भक्तों की भक्ति को जानना अत्यंत कठिन है |

भागवत में दो माहात्म्य हैं - एक प्रारम्भ में और दूसरा अंत में, प्रारम्भ में जो माहात्म्य है, वह पद्म-पुराणोक्तमाहात्म्य है और अंत में जो माहात्म्य है, वह स्कन्दपुराणोक्त माहात्म्य है | महाप्रभु वल्लभाचार्यजी को भागवतजी का अंतिम माहात्म्य अत्यधिक प्रिय था, इसका मूल कारण यही था कि इस अंतिम माहात्म्य का सम्बन्ध ठाकुरजी की ब्रजभूमि से है | उन्होंने सम्पूर्ण भारतवर्ष में श्रीमद्भागवत के जितने भी पारायण किये तो पद्मपुराणोक्तमाहात्म्य की अपेक्षा उन्होंने स्कन्दपुराणोक्त-माहात्म्य से ही अपने पारायण को प्रारम्भ किया | महाप्रभु वल्लभाचार्य कृत श्रीमद्भागवत की टीका सुबोधिनी में इस माहात्म्य को जो बहुत अधिक सम्मान मिला है उसका मूल कारण यही है कि इसका सम्बन्ध 'ब्रज' से है | इस माहात्म्य में एक श्लोक है – **"साधन भूमिर्बदरी, फलभूमिर्व्रजभूमि |"** यह वाक्य याद रखने योग्य है, इसका आशय यह है कि अगर मनुष्य को उत्कृष्ट साधना करनी हो तो भारत में अनेकों तीर्थ हैं, आप बद्रीनाथ, केदारनाथ, सेतुबंध रामेश्वर, काशी, प्रयाग आदि स्थानों पर जा सकते हैं किन्तु यदि कोई चाहता है कि हमने पूर्व जन्म में जो साधन किये हैं उसका फल हमें मिल जाये तो इसके लिए ब्रज में आना पड़ेगा क्योंकि स्कन्दपुराणोक्त-माहात्म्य के अनुसार 'ब्रजभूमि' साधनभूमि नहीं है, यह तो फलभूमि है | अब फल क्या है और वह ब्रजभूमि में कैसे प्राप्त होता है, इसे समझने के लिए भागवत के वेणुगीत में गोपियाँ कहती हैं –

प्रायो बताम्ब विहगा मुनयो वनेऽस्मिन्
कृष्णेक्षितं तदुदितं कलवेणुगीतम् |
आरुह्य ये द्रुमभुजान् रुचिरप्रवालान्
श्रृण्वन्त्यमीलितदृशो विगतान्यवाचः ॥(श्रीमद्भागवतजी १०/२१/१४)

अरी सखी ! ब्रज के जिस भी वन में हमारे श्यामसुन्दर विचरण करने जाते हैं, उसी वन में सृष्टि के बड़े-बड़े मुनिगण, अपने कोटि जन्मों के साधनों, तपस्याओं का

फल प्राप्त करके पक्षी बनकर बैठे हैं | इस वन में मयूर, शुक, पिक आदि जितने भी पक्षीगण आये हैं, ये पक्षी नहीं हैं, इस रूप में मुनिगण ही आये हैं, क्यों आये हैं ? अरे ! यह 'ब्रज' फलभूमि है न, इसीलिए ये महात्मा अपनी अनंत जन्मों की साधना का फल लेने यहाँ आये हैं, यह फल उन्हें यहाँ किस रूप में मिल रहा है, वह फल क्या है? अरे ! वृन्दावन के उसी जंगल में, उसी पेड़ की डाली पर ये पक्षी बैठते हैं, जहाँ से ये हमारे कन्हैया का भलीभाँति दर्शन कर सकें | नेत्र साक्षात् श्रीकृष्ण का दर्शन प्राप्त कर लें, क्या इससे बड़ा कोई और फल होगा, इससे बड़ा और फल क्या होगा कि ये चर्म चक्षु श्रीभगवान् का दर्शन कर लें, इन चमड़े की आँखों से भगवान् दिखाई दे जाएँ, इस जीवन का इससे बड़ा फल और क्या हो सकता है ? ये पक्षी आँखों से भी फल ले रहे हैं और कानों से भी फल ले रहे हैं, कान से क्या फल ले रहे हैं, ये पक्षी अपने कानों को खोलकर बैठे हैं कि जब श्यामसुन्दर वन में आयेंगे और वंशी बजाते हुए जायेंगे और उनका वही वेणुगीत जब हमारे कर्णरंध्रों में पड़ेगा तो हम महात्मा समझेंगे कि हमारे समस्त जन्मों की साधनाएँ सफल हो गयीं, आज हमें अपने नेत्रों से श्रीकृष्ण का साक्षात्कार हो गया और कानों से वेणुगीत सुनने और पीने का अवसर मिल गया, ये है वास्तविक फल | इसी शरीर से श्रीकृष्ण का साक्षात्कार, उनकी साक्षात् अनुभूति, यही फल है | गोपियाँ कहती हैं-

अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदामः
सख्यः पशूननु विवेशयतोर्वयस्यैः ।
वक्त्रं व्रजेशसुतयोरनवेणुजुष्टं
यैर्वा निपीतमनुरक्तकटाक्षमोक्षम् । (श्रीमद्भागवतजी१०/२१०७)

अरी सखी, आँखों का यही तो फल है कि जब कन्हैया और दाऊ भैया गायें चराकर लौटते हैं तो हमारे नेत्र उनको देखने के लिए विकल हो जाते हैं | जिनकी आँखों में कृष्ण-बलराम को देखने की विकलता नहीं हुई, उनको आँख होने का कोई फल ही नहीं मिला | हम लोगों के पास आँख तो है किन्तु हमें आँख होने का फल नहीं मिला, हमारे पास कान तो है परन्तु हमें कान होने का फल नहीं मिला | हमारे पास वाणी तो है किन्तु हमें वाणी का फल नहीं मिला | वस्तुतः प्रत्येक इन्द्रिय से श्रीकृष्ण-रस का आस्वादन करना ही सच्चा फल है, जो विशुद्ध भक्तों के संग (सन्निधि) से ही संप्राप्त होता है |

श्रीमाताजी गौशाला में उपमुख्यमंत्री श्रीकेशवप्रसाद मौर्य का आगमन

उपमुख्यमंत्री श्री केशव प्रसाद मौर्य जी दिनांक ७/७/१९ को उत्तर प्रदेश की सबसे बड़ी गौशाला और ब्रज के परम विरक्त सन्त श्रीरमेश बाबाजी महाराज के दर्शन के उद्देश्य से माताजी गौशाला पधारे | श्रीमाताजी गौशाला मे श्री मौर्य जी ने पैदल चलकर समस्त गौ परिसर का अवलोकन किया तथा एशिया के सबसे बड़े गोबर गैस प्लांट को भी देखा | गौवंश की इतनी बड़ी संख्या देखकर उनको बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने पुनः आगमन की भावना व्यक्त की | इसके पश्चात् वे पूज्य बाबा महाराज के दर्शन करने मान मन्दिर पहुँचे और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया | पूज्य बाबाश्री ने वर्तमान शासन व्यवस्था के प्रति संतोष व्यक्त करते हुए श्रीयमुना जी की अविरलता व निर्मलता की बात कही, जिस पर उपमुख्यमंत्री जी ने कहा - " बाबा ! हमारी सरकार यमुना जी के कार्य के लिए कटिबद्ध है |" उनके साथ कैबिनेट मंत्री चौधरी श्रीलक्ष्मी नारायण जी तथा ऊर्जा मंत्री श्री श्रीकांत शर्माजी ने भी यही भावना व्यक्त की |

उस चर्चा के पश्चात् सभी पुनः गौशाला पहुँचे और वहाँ गौ आरती में भाग लिया | गौ आरती के समय सभी ने गौमाता को गुड़ व फल खिलाये | गोधूलि बेला में अपने-अपने बाड़ों मे लौटती हुयी गायों का प्रवाह समुद्रवत प्रतीत हो रहा था, वह अद्भुत दृश्य सभी को बड़ा मनमोहक लगा |

'श्रीब्रजोपासना'

ऑस्ट्रेलिया में बालव्यासाचार्या 'श्रीजी' द्वारा उद्बोधन

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी ब्रजबाला जी, मानमन्दिर, बरसाना

बालव्यासाचार्या श्रीजी के शब्दों में – "हरिदासजी की भक्ति के कारण समाज में चारों ओर इनकी प्रतिष्ठा, इनका सम्मान बहुत बढ़ गया था | एक जमींदार इनसे बहुत द्वेष करता था, उसने इनकी प्रतिष्ठा को नष्ट करने के लिए एक बार किसी वेश्या को तैयार किया, उससे कहा कि तुम हरिदास की कुटिया पर एकान्त में जाओ और उससे प्रेम की मीठी-मीठी बातें करो तथा ऐसे-ऐसे हाव-भाव प्रदर्शित करना कि जिससे वह तुम्हारे ऊपर आसक्त हो जाए | जब ऐसा होगा तो मैं समाज में सब जगह उसकी निंदा करूँगा कि यह बहुत बड़ा भक्तराज बनता है किन्तु वास्तव में तो यह वेश्यागामी है | इस तरह सब जगह उसकी बदनामी हो जाएगी | जमींदार के प्रलोभन देने पर वह वेश्या बढ़िया श्रृंगार करके हरिदासजी की कुटिया में पहुँची | हरिदासजी ऐसे नामनिष्ठ संत थे कि वह प्रतिदिन तीन लाख नाम-जप उच्च स्वर से किया करते थे | तीन लाख नाम-जप करने के पश्चात् ही वह अपने आसन से उठते थे | जब वेश्या हरिदासजी की कुटिया पर पहुँची, उस समय वह उच्च स्वर से नामोच्चोरण कर रहे थे | वेश्या ने उनके सामने अपनी जिज्ञासा रखना चाहा तो हरिदासजी ने संकेत में उससे कहा - देवी ! अभी तुम बैठ जाओ, जब मेरे हरिनाम-जप की संख्या पूरी हो जायेगी तब मैं तुमसे बात करूँगा | हरिदासजी सुबह से रात्रि तक एक आसन पर बैठकर जोर-जोर से भगवन्नाम लेते रहे और जैसे ही वेश्या उनसे बोलने के लिए खड़ी होती तो उससे कह देते – हे देवी ! अभी थोड़ा और इंतजार करो, जब मेरी भगवन्नाम-जप की संख्या पूरी हो जाएगी तब तुमसे बात करूँगा, बस थोड़ी देर और रुक जाओ | इस प्रकार तीन दिन बीत गए, वेश्या प्रतिदिन उनकी कुटिया में सुबह से रात तक बैठकर प्रतीक्षा करती कि कब ये मुझसे बात करेंगे | अन्त में तीन दिन, तीन रात लगातार हरिदासजी जैसे महापुरुष के

मुख से श्रीभगवन्नामोच्चारण सुनने से उसके पाप नष्ट हो गए, उसका मन शुद्ध हो गया और वह पश्चाताप करने लगी कि अरे, इतने बड़े संत के निकट मैं इतनी नीच भावना को लेकर आई, मैंने बहुत बड़ा अपराध किया है | इस प्रकार अपने अपराध के प्रति पश्चाताप करते हुए वह वेश्या हरिदासजी के चरणों में गिर पड़ी | उनके सत्संग और उनके मुख से हरिनाम ध्वनि श्रवण करने के कारण वेश्या पवित्र हो गई और हरिदास जी की शिष्या बन गई तथा वेश्यावृत्ति का त्यागकर परम साध्वी बन गई | उसका सम्पूर्ण जीवन भक्तिपरायण हो गया | इस तरह सत्संग से ही मन के कुत्सित विकार तथा शरीर के दोष भी नष्ट होते हैं | संतों के सानिध्य में हमें भक्त-भगवंत के सुन्दर चरित्र सुनना चाहिए | अपने घर में भी हमें भक्तिपूर्ण साहित्य पढ़ना चाहिए, जिससे परिवार के सदस्यों में भक्ति के संस्कार जाग्रत हों | शरीर के दोष, मन के दोष तथा समस्त संकट संत के आश्रय से, नाम के आश्रय तथा धाम के आश्रय से पूर्णतया विनष्ट हो जाते हैं | उसमें भी यदि सत्संग धाम में किया जाये तो हमें धाम की कृपा भी प्राप्त होती है | भागवत में कथा आती है कि नारदजी ने ध्रुवजी को तपस्या करने के लिए मधुवन में भेजा और कहा कि तुम यमुना तट पर जाओ | यमुनाजी तो कई जगह बहती हैं, दिल्ली में भी बहती हैं, इटावा में भी बहती हैं तो किस जगह जाया जाय | नारदजी बोले कि मधुवन में जाओ, जहाँ भविष्य में ठाकुरजी लीला करेंगे, वहाँ जाने से क्या होगा ? दो चीजें होती हैं - धाम और धामी | 'धामी' माने धाम के अधिपति | भगवान् के धाम और स्वयं भगवान्, इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है, इसीलिए ब्रजधाम में जो आराधना की जाती है, वह साक्षात् भगवान् की गोद में बैठकर की जाती है | जो उपासना ठाकुरजी की गोद में बैठकर की जायेगी, वह भला क्यों नहीं सिद्ध होगी | जिस समय आदि शंकराचार्यजी पूरे भारतवर्ष में

भ्रमण कर रहे थे तो जहाँ वह बैठते थे उनके शिष्य लोग उस भूमि का खनन करते थे फिर उसके बाद बुहारी लगाई जाती थी और उस स्थान को गाय के गोबर से लीपा जाता था, तब शंकराचार्यजी उस भूमि पर विराजमान होते थे किन्तु जैसे-जैसे ब्रजभूमि निकट आती गयी तो उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि अब भूमि को मत खोदो | इसके बाद जब ब्रजभूमि और नजदीक आती गयी तो उन्होंने शिष्यों से कहा कि अब भूमि को गोबर से मत लीपो, केवल बुहारी लगा दो और जब ब्रजभूमि अधिक निकट आ गयी तो उन्होंने शिष्यों से कहा कि अब भूमि पर बुहारी भी मत लगाओ | अनन्तर जब उन्होंने ब्रज में प्रवेश किया तो वे ब्रजरज में लोटने लगे | इसका कारण यही है कि इस त्रिलोकपावनी ब्रज-वसुंधरा में तो साक्षात् श्रीकृष्ण भी लोट लगाते हैं, यहाँ की रज को अपने सर्वांग में लगा लेते हैं | ब्रजरसिकों ने भी श्रीकृष्ण के ब्रजरज-प्रेम के बारे में गान किया है –

"ब्रज की कीच लगे याय प्यारी लोटे मटमैलो, ब्रज को रसिया रंग रंगीलो मेरो मोहन अलबेलो |" ब्रज की रज को तो ठाकुरजी ने खाया भी है | यशोदा मैया अपने लाला को प्रतिदिन स्नान कराकर उसका बढ़िया श्रृंगार करती थीं किन्तु कन्हैया तो जाकर ब्रजरज में लुटलुटी लगा आते थे तब उन्हें संतोष होता था | मैया कन्हैया को डांटती थीं – "लाला ! तुझे साफ़-सुथरा रहना अच्छा नहीं लगता क्या ? मैं प्रतिदिन स्नान कराकर तेरा श्रृंगार करती हूँ और तू बार-बार जाकर ब्रजरज में लोट लगाता है |"

गर्ग संहिता में वर्णन आता है कि एक बार मैया ने कन्हैया से कहा – "लाला ! मिट्टी मत खाना |" कृष्ण सोचने लगे कि मैया तो मुझे ब्रजरज खाने से रोकती है, अब मैं इसे कैसे खाऊँगा | उस समय ठाकुरजी ने ऐसी लीला की कि उनकी ग्वाल-लीला से मोहित होकर ब्रह्माजी समस्त बछड़ों और ग्वालबालों को चुराकर अपने ब्रह्मलोक में ले गये और एक वर्ष तक उन्हें वहीं अचेत करके रखा | उस समय ठाकुरजी स्वयं ही एक रूप से बछड़े और ग्वालबाल बन गये | आचार्यों के बहाने अच्छी प्रकार से ब्रजरज का आस्वादन किया जा सके | अतः ब्रजरज तो ठाकुरजी को अतिशय प्रिय है | ब्रज की रज और यहाँ का सब कुछ विशेष है, दिव्य चिन्मय है | बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों ने करोड़ों वर्षों तक तपस्या की तब उन्हें ब्रज में पक्षी बनने का सौभाग्य मिला है | स्वयं सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी को भी साठ हजार वर्षों से भी अधिक समय तक कठोर तपस्या करके बरसाना में ब्रह्माचल पर्वत बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है इस भावना के साथ कि कैसे भी मुझे ब्रज की गोपियों और ग्वालों की चरण-रज मिल जाये | स्वयं मुक्तिदेवी भी अपनी मुक्ति के लिए ब्रजरज की कामना करती हैं – **मुक्ति कहै गोपाल सों, मेरी मुक्ति बताओ |**

ब्रजरज उड़ मस्तक लगे, मुक्ति मुक्त ह्वै जाये ||

ब्रजरज में ऐसी ही असीम सामर्थ्य है | इसीलिए इस सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध रसिया है –

"ब्रज की रज में धूर बनूँ मैं, ऐसी कृपा करो महाराज |"

ब्रज में हम लोग अपने स्वयं के प्रयास से नहीं पहुँच सकते हैं | श्रीराधारानी और उनके अनन्य भक्त किसी धामनिष्ठ महापुरुष की कृपा से ही ब्रज में जाया जा सकता है | ऐसे ही श्रीजी और उनके धाम के अनन्य उपासक हैं हमारे पूज्य गुरुदेव श्री रमेश बाबाजी महाराज, जो प्रयाग में अत्यंत धनी परिवार में जन्मे किन्तु ब्रज-प्रेम के कारण सब कुछ छोड़कर केवल सोलह वर्ष की अवस्था में ही ब्रजभूमि में चले आये | यह रसिया उन्हीं के द्वारा रचित है | आप लोग ऑस्ट्रेलिया में रह रहे हैं, अतः ब्रज में रह तो नहीं सकते किन्तु आप लोग भारतवासी हैं अतः ब्रज में बार-बार आते रहिये | संसार में जब कोई किसी से सम्बन्ध बढ़ाता है तो लोग वहाँ जाते हैं, आपके यहाँ कोई कार्यक्रम होता है तो आपके प्रियजन आपके घर आते हैं, इसी प्रकार जब ठाकुरजी से सम्बन्ध बढ़ाना है तो उनके घर, उनके धाम ब्रज में जाना पड़ेगा तभी तो ठाकुरजी से सम्बन्ध जुड़ेगा | इसलिए ब्रज में बार-बार आया करिए और अनन्य ब्रजनिष्ठ संत पूज्य श्रीरमेशबाबा महाराजजी जैसे संत का दर्शन करें, उनके सत्संग का लाभ उठायें और देखें कि कैसे उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन श्रीराधामाधव और उनके धाम की सेवा में समर्पित कर दिया है |"

यद्यपि कहीं-कहीं गुरु करना अत्यंत अनिवार्य बताया गया है किन्तु सच्चे सद्गुरु की प्राप्ति के अभाव में भक्ति-शास्त्रों में भगवान् को भी गुरु रूप में वरण करने की आज्ञा दी गयी है |

बाल साध्वी मधुवनी जी ने जीता श्रोताओं का दिल

गोमत के निकट ग्राम मऊ (अलीगढ़) के ब्रजवासी मानमंदिर आये और श्रीमद्भागवत वक्त्री के रूप में बाल साध्वी मधुवनी जी को साथ ले गए | यद्यपि एक बार तो उन्हें ऐसा लगा कि एक छोटी-सी बालिका क्या कथा कहेगी परन्तु ज्ञानवान की उम्र नहीं देखी जाती है | कोई भी भक्त किसी एक जन्म की साधना से सिद्धावस्था को प्राप्त नहीं होता है अपितु अनेकों जन्मों की साधना उसके साथ रहती है यथा भक्त ध्रुव जी ने मात्र ५ वर्ष की अवस्था में ही प्रभु-प्राप्ति कर ली थी | मानमंदिर का वातावरण ऐसा है कि जहाँ सतत् सत्संग चलता रहता है, ऐसे वातावरण में कोई पले-बढ़े तो भला उसके सन्दर्भ में शंका कोई करे तो वह निरर्थक ही है | साध्वी मधुवनी जी ने अपने मार्मिक दृष्टान्तों व सिद्धांतों से सभी का हृदय जीत लिया | यही कारण था कि वहाँ एक चमत्कार भी हुआ | प्राचीन शिवमंदिर के परिसर में यह कथा चल रही थी तभी किसी परिवार में चर्चा चली कि कथा में कम से कम ११०० रुपये और सवा मन अन्न अवश्य देना चाहिए परन्तु उस परिवार के एक लड़के ने कहा कि हम मात्र ५०० रु. ही देंगे | उसकी बात को कोई काट नहीं सका और वह ऐसा कहकर पास ही में खेत पर जाकर सो गया | सोकर उठा तो देखा एक काला नाग जोर-जोर से फुफकार रहा है, वह भय के कारण चारपाई से भी नहीं उतर सका, उसने शोर मचाया तो काफी लोग एकत्रित हो गए तब भी नाग नहीं हटा | तभी उस लड़के के मन में जाने क्या आया और वह बोला कि नागदेवता आप चले जाओ, मैं ११०० रुपये और सवा मन अन्न ही कथा में चढ़ाऊँगा | यह सुनकर नाग देवता चले गए | यद्यपि आज तार्किक जन इन बातों को अधिक महत्व नहीं देते हैं परन्तु आज भी चमत्कार अवश्य होते हैं |

बाल साध्वी देवी दया जी की श्रीमद्भागवत कथा

अनीहामयी वृत्ति जिन्हें अपने पूज्य गुरुदेव से सहज में मिली हुई है, ऐसी देवी दयाजी जो साक्षात दयामूर्ति हैं, द्वादश वर्षीया इन बालसाध्वी ने हाल ही में दाऊजी के निकट कथा कही तो आपके अलौकिक व्यक्तित्व की छाप समस्त ग्रामवासियों पर पड़ी | ग्राम नगला लोका के एक ऐसे स्थल, जहाँ कई गाँवों की आस्था है, वहीं के पूजन के पश्चात् ही सभी लोग अपने मांगलिक कार्य का शुभारम्भ किया करते हैं | शुकदेवजी जिस प्रकार परीक्षितजी को 'कथा' श्रवण कराकर जैसे आये थे, वैसे ही लौट गए थे; वही आदर्श ब्रजबालिका दया जी (जो मानमंदिर परिसर में पली व पढ़ी) ने रखा | चूँकि ब्रज के परम विरक्त सन्त पूज्य गुरुदेव ने अपने जीवन में कभी द्रव्य का स्पर्श तक नहीं किया, वही शिक्षा वहाँ सभी को सहज सुलभ होती है | कथा-प्रारंभ से समाप्ति तक भगवच्चर्चा के अतिरिक्त आपने कोई अन्य प्रसंग नहीं कहा तथा सब द्रव्य भी वहीं छोड़कर चली आयीं | यही कारण था कि कथा में गिरिराज-पूजन के अवसर पर एक ओर जहाँ घनघोर वर्षा हो रही थी तो दूसरी ओर कथा भी निरंतर चल रही थी | वर्षा के जल ने सम्पूर्ण पांडाल को आप्लावित कर दिया परन्तु एक भी श्रोता वहाँ से गया नहीं | जब तक गिरिराज-पूजन का प्रसंग चला, सभी श्रोता भीगते हुए निरंतर कथा-श्रवण करते हुए खड़े रहे | जिनका जीवन क्रियात्मक होता है तो वह लोक-कल्याण का सहज कारण बन जाता है | भगवन्नाम के प्रति निष्ठा की प्रेरणा उन्होंने ग्रामवासियों को दी, फलतः दैनिक प्रभात फेरी में अधिकांश ग्रामवासी नित्य जाने लगे |

भगवन्नाम ही एकमात्र सबसे बड़ा मन्त्र है 'एको मन्त्रस्य नामानि' और वह हमेशा फलप्रद होता है, भगवन्नाम लेने में दीक्षा अपेक्षित नहीं है –

दीक्षा पुरश्चर्या विधि अपेक्षा न करे | (चैतन्यचरितामृत)

आराधनीय 'अवतरित धाम'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'धाम-महिमा' (८ मई २००६) से संग्रहीत
संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी माधुरी जी, मानमन्दिर, बरसाना

जैसे बीज का गुण वृक्ष में आता है, वैसे ही भगवान् का नित्य धाम जब अवतार लेता है तो नित्य धाम के सब गुण उसके अवतरित धाम में रहते ही हैं, जहाँ वह अवतार लेता है, अधिभूत में भी उसके वही गुण रहते हैं | इसलिए यह जो धाम हमें दिखाई पड़ रहा है, इसमें ही आस्था और विश्वास करके आगे बढ़ना चाहिए, उदाहरण से समझें – भगवान् का नाम हम जैसे लोगों को प्राकृतिक प्रतीत होता है, जैसे- राम लिखना है तो 'र' में बड़ा 'अ' और 'म' लिखा जायेगा, इसी तरह कृष्ण लिखना है तो 'क' में 'रि' फिर आधा 'ष' और 'ण' लिखना पड़ेगा, वस्तुतः वास्तविक जो नाम है, वह हमें दिखाई नहीं पड़ता और न ही अनुभव में आता है किन्तु जो नाम का अक्षरात्मक स्वरूप हमारे अनुभव में आता है, उसका ही आश्रय करके, उसका ही संकीर्तन करते हुए, उसमें ही भावना करते हुए जब साधक आगे बढ़ता है तब उस नाम का एक दिन अनुभव होता है, जो चिन्मय है और उसकी चिन्मयता का अनुभव होने के बाद कुछ पाना बाकी नहीं रह जाता है; वह जो चिन्मय नाम है, जिसका शिव आदि योगेश्वर अनुभव करते हैं -

नाम प्रभाउ जान सिव नीको |
कालकूट फलु दीन्ह अमी को ||

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड – १९)

जिस 'नाम' ने शिवजी के लिए कालकूट जैसे भयंकर विष को भी अमृत फल बना दिया | कालकूट भी जिस 'नाम' के प्रभाव से अमृत बन गया, उस नाम का अनुभव अभी हम जैसे लोगों को नहीं हो रहा है किन्तु जो अक्षरात्मक नाम हमारे अनुभव में आ रहा है, वही नाम के चिन्मय स्वरूप तक पहुँचने की सीढ़ी है | वहाँ तक हम पहुँच नहीं पा रहे हैं क्योंकि नामापराध हो जाता है तथा अन्य कई कारण हो जाते हैं |पद्मपुराण में लिखा है –

नामैकं यस्य वाचि स्मरणपथगतं श्रोत्रमूलंगतं वाशुद्धं वाशुद्धवर्णं व्यवहृतरहितं तारयत्येव सत्यम् । तच्चेद्देह-द्रविणजनता-लोभ-पाखण्ड-मध्ये निक्षिप्तं स्यान्न फलजनकं शीघ्रमेवात्र विप्र ॥

"नामैकं यस्य वाचि....." भगवान् का नाम तो इतना शक्तिशाली है कि अगर स्मरण में भी आ जाय या कान में सुनाई पड़ जाय तो भी जीव का कल्याण करता है | "शुद्धं वाशुद्धवर्णं....." राम की जगह रामा कह दिया या कुछ भी कह दिया तो भी निश्चित ही भगवान् का नाम तार देता है, फिर भी हम जैसे लोगों को भगवन्नाम तार नहीं रहा है, हमारे मन में काम आदि विकार आते हैं, क्यों आते हैं, इसका कारण यही है कि हम लोग यथार्थ रूप से नाम नहीं लेते हैं, 'शुद्ध नाम' को नामाभास में बदल देते हैं | "तच्चेद्देहद्रविणजनतालोभपाखण्डमध्ये....." वह नाम जब देह के सुख के लिए, पैसे के लिए, पाखण्ड के लिए, प्रदर्शन के लिए, लोभ के लिए लिया जाता है तो शीघ्र फल नहीं देता; इसीलिए नाम की चिन्मयता का वास्तविक अनुभव हमें नहीं होता है, यही बात धाम के विषय में भी है | यह कलियुग का खेल है कि आजकल कीर्तन करने वाले भी पैसा लेते हैं, कथावाचक भी पैसा लेते हैं, हर चीज व्यापार बन गई है | काल के क्रम से प्रत्येक वस्तु ने ऐसा रूप बना लिया कि कलियुग ने सबको सारहीन कर डाला | थोड़ा-सा भी लोभ, थोड़ी-सी भी कामना वस्तु को सारहीन बना देती है | भगवान् ने श्रीगीताजी '१६/१२' में कहा है -

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥

शास्त्रों के श्लोकों की व्याख्या करने वाले हम जैसे तथाकथित धर्माचार्य लोग ही लोभग्रसित होते हैं जबकि भाषण बहुत उच्च कोटि का देते हैं |

संकीर्तन करना यज्ञ ही है | भगवान कहते हैं कि इतना बड़ा यज्ञ किया गया किन्तु वह राजस क्यों बन गया ? **"अभिसन्धाय तु फलं.....||"**

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १७/१२)

बहुत बड़ा यज्ञ फल की इच्छा से, दम्भ की इच्छा से किया गया तो वह राजस बन जाता है | कोई भी सत् कार्य कामना से किया गया, अहं भाव से मान-सम्मान के लिये किया गया तो वह सब राजस बन जाता है | इसीलिये राजस कर्मों का राजस फल और तामस कर्मों का तामस फल सामने आता है तथा उस कल्याणकारी कर्म की चिन्मयता, उसकी वास्तविकता का अनुभव नहीं हो पाता है | ऐसा देखा जाता है कि लोग आजीवन कथावाचन करते रहते हैं परंतु उनके जीवन में केवल धन संग्रह और भोग दिखाई पड़ता है | सारे जीवन लोग पैसा लेकर कीर्तन करते रहते हैं और उनकी काम व लोभ की वृत्ति नहीं छूटती | इसी तरह सारे जीवन लोग मन्दिरों में पूजा करते रहते हैं किंतु उनकी लोभ की वृत्ति नहीं छूटती, कोई भी असद् वृत्ति नहीं छूटती है; इसका कारण यही है कि कथा-कीर्तन और श्रीठाकुरजी की सेवा-पूजा की चिन्मयता का उनको अनुभव नहीं हुआ | इसी प्रकार लोग आजीवन धाम में रहते देखे जाते हैं किन्तु उनकी वृत्ति में कोई अंतर नहीं दिखाई पड़ता क्योंकि जैसे नामापराध होता है, वैसे ही धामापराध होता है | जैसे नामापराध के कारण नाम का वास्तविक फल नहीं मिलता है, वैसे ही धामापराध के कारण धामवास का भी वास्तविक फल नहीं मिलता है | इसीलिए एक कृष्ण नाम का जो फल है, वह भी नहीं दिखाई पड़ता | शुकदेवजी ने व्यासजी के शिष्यों के मुख से श्रीमद्भागवत के केवल दो श्लोक सुने थे और उसी के प्रभाव से वे कृष्णपरायण हो गये, इसी प्रकार ब्रजगोपियों ने एक बार भूल-चूक में कहीं से 'कृष्ण' नाम सुना, उसके पहले उन्होंने कृष्ण को देखा भी नहीं था और 'एक कृष्ण' नाम सुनने का यह फल हुआ कि वे रस के समुद्र में, अनंत आनंद में डूब गयीं | एक गोपी कहती है –

"कृष्ण नाम सुन्यो जबते री आली,
भूली री भवन हौं तो बावरी भई री |"

क्या हो गया मुझे, एक बार कहीं से कृष्ण नाम सुनाई पड़ा था और उसे सुनकर मैं तो पागल हो गई हूँ |

भरि-भरि आवै नैन चित हू न पड़े चैन,
तन की दशा कछु औरे भई री |
जेतिक नेम धर्म किये मैं विबिध बिधि,
अंग-अंग भई हौं तो श्रवणमयी री ||

मेरे रोम-रोम में कान हो गये हैं, उस कृष्ण नाम को सुनने के लिए | **"नन्द दास जाके श्रवण सुनत यह गति भई,**
माधुरी मूरत कैधों कैसे के भई री ||"

उस गोपी ने केवल एक बार कृष्ण नाम सुना था, अभी तक कृष्ण को देखा भी नहीं था लेकिन रोम-रोम में कान हो गए, कृष्ण-प्रेम का उदय हो गया, नेत्रों से बराबर आँसू बह रहे हैं और कृष्ण-प्रेम प्राप्त हो गया | वह कहती है कि जिसके नाम में इतना मीठापन है वह स्वयं कैसा होगा, उसका रूप कैसा होगा ? अब कृष्ण नाम तो हम लोग भी लेते हैं, सुनते हैं परन्तु ऐसी स्थिति हमारी नहीं हो रही है | इसका कारण पहले ही बताया जा चुका है कि अभी हमारे मुख से वास्तविक नाम नहीं निकला है, अभी तो हमारे मुख से नामाभास निकला करता है | इसीलिए हमारी भगवत्प्रेमियों जैसी दिव्य स्थिति नहीं है लेकिन यह अवश्य है कि जितने भी नामापराध और अन्य अपराध हैं वे नामाभास से ही भस्म होते हैं | उदाहरण के लिए अजामिल का ही प्रसंग देख लीजिये | उसके मुख से अंतिम समय नामाभास निकला था –

म्रियमाणो हरेर्नाम गृणन् पुत्रोपचारितम् ।(श्रीमद्भागवतजी ६ /२ /४९)
अजामिलोऽप्यगाद्धाम किं पुनः श्रद्धया गृणन् ॥

श्रीशुकदेवजी कहते हैं कि अजामिल मरने वाला था, उपरोक्त श्लोक में प्रयुक्त शब्द 'म्रियमाण' का अर्थ है कि उसकी अंतिम साँस चल रही थी और उस समय उसने अपने पुत्र के नाम के बहाने से हरिनाम लिया, जिससे अजामिल भगवद्-धाम को प्राप्त हो गया, फिर जो श्रद्धा से नाम लेते हैं, उनके बारे में तो कहना ही क्या है | पापी अजामिल ने तो पुत्र के बहाने भगवन्नाम लिया था, फिर श्रद्धा से भगवान् का नाम लेने वाला क्यों नहीं भगवद् धाम जायेगा | यमदूतों ने विष्णुदूतों से कहा कि अजामिल तो बड़ा पापी है, तुम लोग इसको नरक जाने से क्यों रोकते हो ? विष्णुदूतों ने कहा –

अयं हि कृतनिर्वेशो जन्मकोट्यंहसामपि । (श्रीमद्भागवतजी ६/२ /७)
यद् व्याजहार विवशो नाम स्वस्त्ययनं हरेः ॥

तुम जानते नहीं हो, इसने भगवान् का नारायण नाम बोलकर करोड़ों जन्मों के पापों का प्रायश्चित कर लिया है | इसलिए नामाभास में ही इतनी शक्ति है | किसी को निराश नहीं होना चाहिए कि हमारे द्वारा चिन्मय नाम का उच्चारण नहीं हो रहा है | भगवान् का नामाभास ही कल्याण का भवन है | इसलिए मनुष्य को निरंतर विश्वास के साथ भक्ति में बढ़ना चाहिए |.....क्रमशः

सेवाराधना का स्वरूप

श्रीबाबा महाराज के सत्संग 'गोपी-गीत' (२७/८/१९९४) से संग्रहीत
संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी कृष्णा जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे) - एक उदाहरण देते हैं - तानसेनजी इस युग के बहुत बड़े गायक हुए हैं, उनकी तान के बारे में कहा जाता है कि यह अच्छा हुआ कि ब्रह्मा ने शेषनाग को कान नहीं दिए, नहीं तो तानसेन की तान सुनने से उनका मस्तक हिलता और पृथ्वी डोलती; वैसे तो यह अतिश्योक्ति है फिर भी तानसेन बहुत बड़े गायक हुए हैं और वे प्रायः ब्रजभूमि में आते रहते थे, वे श्रीविट्ठलनाथजी के कृपापात्रों में भी थे | उस समय ब्रज में कई कुशल संगीतज्ञ महात्मा भी रहते थे | एक बार तानसेन ब्रज में पधारे तो उन्होंने सुना कि गोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य गोविन्द स्वामीजी बहुत अच्छे गायक हैं | वास्तव में गोविन्द स्वामीजी जी अत्यधिक कुशल गायक थे | इनके संगीत को साक्षात् श्रीठाकुरजी सुनते थे और यहाँ तक कहा जाता है कि स्वयं श्रीश्यामसुंदर भी इनके साथ बैठकर के गाया करते थे क्योंकि वे इनके सखा थे | गोकुल में एक टीला है, वहाँ बैठकर के दोनों मित्र गोविन्द स्वामी और श्रीगोकुलनाथजी तान भरते थे | एक बार तानसेन ने गोकुल में आकर ठाकुरजीजी का दर्शन किया और गुसाईंजी को प्रणाम किया | गुसाईंजी ने तानसेन के मन की बात जानकर उनसे कहा – "तानसेन जी ! तुम ठाकुरजी के लिए कोई गीत सुनाओ |" गुसाईं जी की आज्ञा से विश्वप्रसिद्ध गायक तानसेनजी ने तानपूरा उठाया और गाने लग गए, यह बहुत ही उत्कृष्ट गान था | गान के बाद में गुसाईंजी की ओर से तानसेन को गोकुलनाथजी की प्रसादी दी गयी | उन्हें एक थाल भेंट किया गया, जिसमें सोने की मुद्राएँ और ठाकुरजी का प्रसादी पटुका था किन्तु एक विचित्र बात यह थी कि सोने की मुद्राओं के ऊपर एक कानी कौड़ी रखी हुई थी | सेवाधिकारीजी ने तानसेन से कहा कि ये आपके लिए ठाकुरजी का प्रसाद है तो उन्होंने झोली पसारकर गोकुलनाथजी का प्रसाद, पटुका और सोने की मुद्राओं का थाल ग्रहण किया | उस थाल के ऊपर एक कानी कौड़ी रखी हुई थी तो तानसेन ने विचार किया कि इसमें कोई न कोई रहस्य है क्योंकि यह कानी कौड़ी जानबूझकर ही तो सोने से भरी मुद्राओं के ऊपर रखी गयी है और फिर यह मन्दिर के भीतर से आई है, वहाँ भला कानी कौड़ी का क्या काम ? दूसरी बात यह भी है कि यदि यह कहीं से थाल पर गिरी होती तो इधर-उधर गिरती किन्तु यह तो थाल के मध्य में ही सजाकर रखी हुई है | तानसेन बड़े ध्यान से उस कानी कौड़ी को देखते रहे | उन दिनों भारत में बड़ी सभ्यता थी | सभी लोग आचार्यजी (गोस्वामीजी) को कृष्णरूप मानते थे | वस्तुतः सभी आचार्य भगवत्स्वरूप ही हैं, इसमें कोई संदेह नहीं समझना चाहिए | गोस्वामी विट्ठलनाथजी ने तानसेन से कहा – "तानसेन जी, आप क्या विचार कर रहे हैं, क्या आप कुछ पूछना चाहते हैं ?" तानसेन बोले – "जय-जय ! यह तो आपकी मेरे ऊपर कृपा है जो आपने मुझे ठाकुरजी का प्रसाद, पटुका और स्वर्ण मुद्राओं से भरा थाल प्रदान किया किन्तु इनके बीच में जो कानी कौड़ी रखी हुई है, इसका रहस्य मैं नहीं समझ पा रहा हूँ कि यह किसलिए भेंट में दी गयी है ?" गोस्वामीजी हँसने लगे और बोले – "देखो तानसेनजी ! गवैया अथवा कला की दृष्टि से तो तुम्हारी कोई कीमत ही नहीं है और इस उद्देश्य से तुम्हें सोने के थाल में जो स्वर्ण मुद्राएँ भेंट में दी गयीं, वे भी कम हैं; अतः कला की दृष्टि से तो तुम्हें यह भेंट दी गयी लेकिन भावपक्ष की दृष्टि से कानी कौड़ी दी गयी है क्योंकि इतनी बड़ी गानकला को तुम एक भोगी राजा अकबर को सुनाते हो | इसलिए जो वस्तु संसार के लिए प्रयोग की जाती है, उसकी कीमत कानी कौड़ी ही है और जो वस्तु प्रभु के काम आती है, वही अनंत व अमूल्य है |" विशुद्ध भक्तिमय (निष्काम भक्तियुक्त) शिक्षा दी गोस्वामीजी ने |

मनुष्य पाँच पैसा भी यदि खर्च करता है तो वहाँ करता है जहाँ दुनिया के लोग जान सकें | दस रुपये भी मनुष्य भेंट करता है तो दिखाते हुए करता है कि दुनिया देखे | आदमी पत्थर पर अपना नाम अंकित करवाता है कि ये कमरा मैंने बनवाया है, मंदिरों में फूल बंगले बनाये जाते हैं तो उन पर भी बनवाने वाले का नाम लिखा जाता है | उदाहरण के लिए - किसी सेठजी द्वारा फूल बंगला बनाये जाने पर लिखा जाता है कि दो लाख रुपये में यह फूल बंगला सेठ कौड़ीमल की ओर से बनवाया गया है | इससे पता चलता है कि वस्तुतः यह वस्तु श्रीकृष्ण के लिए नहीं है | जो वस्तु केवल श्रीकृष्ण के लिए है उसमें किसी को दिखाने का भाव नहीं होना चाहिए, कोई न जाने, केवल प्रभु ही जाने, यही वास्तविक सेवा है | जहाँ प्रदर्शन (दिखावा)

है, ढोंग है, जीवाश्रय है तथा मैं (अहंता) को लेकर जो चीज की जा रही है कि मैं कर रहा हूँ, वह सेवा भगवान् स्वीकार नहीं करते हैं क्योंकि वह भगवान् के लिए है ही नहीं, ऐसी स्थिति में भगवान् उसे स्वीकार क्यों करेंगे ? प्रभु अन्याय नहीं करते हैं | हमलोग तो वेश्या वाला धंधा करते हैं, जैसे - वेश्या बहुत अच्छा नाचती-गाती है किन्तु उसकी इस कला का प्रदर्शन केवल दुनिया के लोगों (भड़ुओं) को रिझाने के लिए होता है, उसी प्रकार हम लोग सारा कार्य अपनी अहंता की तुष्टि, मान-बड़ाई के लिए करते हैं इसलिए इस प्रकार की सेवा भगवान् के लिए नहीं होती है | हमलोग दुनिया की प्रशंसा (वाह-वाह) चाहते हैं, हम अपना यश (नाम) चाहते हैं, इन सबकी कीमत केवल १ कौड़ी है, अधिक नहीं है चाहे वह सेवा अरबों रुपयों द्वारा ही क्यों न की गयी हो लेकिन वह प्रभु के लिए नहीं, अपने नाम के लिए है, अहंता (मान-बड़ाई) के लिए है अतः उसकी कीमत केवल १ कौड़ी है | वास्तव में उसकी कीमत १ कौड़ी भी नहीं बल्कि फूटी कौड़ी है | प्राचीनकाल में अच्छी कौड़ी के द्वारा वस्तुओं को खरीदा जाता था, व्यापार किया जाता था, अब तो वह बात गप्प हो चुकी है | उस जमाने में अच्छी कौड़ी को लेकर बाजार में जाने पर नमक, मिर्च आदि सामान मिल जाता था लेकिन फूटी कौड़ी के बदले में कुछ नहीं मिलता था | हमलोग तो संसार में जितना भी कार्य करते हैं केवल फूटी कौड़ी का ही करते हैं | फूटी कौड़ी के द्वारा केवल नीचे का कार्य करते हैं अर्थात् केवल अपने मान-सम्मान के लिए कार्य करते हैं, कार्य के पीछे केवल बड़प्पन अथवा प्रदर्शन की भावना रहती है, लोग हमें जानें केवल यह भावना रहती है | सांई (प्रभु) के दरबार में सांसारिक वासनामय भावना की कोई कीमत नहीं है | हाँ, संसार में तो ऐसा चलता है, जैसे कि कहा गया है - **"भूत विद्या मल्लई, १२ साल चल्लई |"** भूतविद्या और पहलवानी की गाड़ी संसार में थोड़े दिन तक तो चल जाती है किन्तु अंत में इसका परिणाम अच्छा नहीं होता | संसार में ऐसा देखा जाता है कि बड़े-बड़े धर्माचार्य भी वैभवपूर्ण प्लॉट बनाते हैं, बेचते हैं, उनके लिए पैसा ही सब कुछ है, पैसा ही भगवान् है | इसका परिणाम यह होता है कि उनकी वृत्तियाँ माया में फँस जाती हैं | वृत्तियों का लक्ष्य क्या रहा ? शुद्ध माया, लेकिन सच्ची सेवा का यह फल नहीं होता है; जो सच्चे मन से सेवा करता है, श्रीप्रभु अपने-आपको उसे बेच देते हैं, उसे अपना सर्वस्व अर्पित कर देते हैं लेकिन सच्ची सेवाराधना होनी चाहिए | वास्तव में सेवा नहीं हो पाती है - **"जैसी तेरी कौमरी, तैसे तेरे गीत"** अर्थात् जो जिस भाव से सेवा करता है यानि मान-प्रतिष्ठा की भावना से सेवा करता है तो भगवान् उसको वैसा ही फल देते हैं, क्या देते हैं – **माया, मन्दिर, स्त्री, चौथो जग व्यवहार |**

ये संता को तब मिलें, जब कोप्या करतार ||

जिसको हमलोग संसार में भगवान् की बहुत बड़ी कृपा समझते हैं वस्तुतः वह भगवान् का कोप होता है | माया अर्थात् धन-सम्पत्ति मिल गयी, मंदिर अर्थात् कोई मठ मिल गया, स्थानाधिपति (मठाधीश) बन गए, स्त्री अर्थात् ५-१० चेलियाँ बन गयीं, स्वादिष्ट व्यंजन (माल-टाल) खिलाने लगीं और जगव्यवहार अर्थात् संसार में बड़ी प्रतिष्ठा हो गयी, गुरु नानकजी कहते हैं कि इन सबका मिलना ईश्वर का कोप है | इस बात को हमें ठीक से समझ लेना चाहिए परन्तु इसे समझना भी आजकल बड़ा मुश्किल है | आजकल अध्यात्मपथ पर चलने वाला व्यक्ति 'गुरुनानकदेवजी' द्वारा कही हुई उपरोक्त वस्तुओं की ही तलाश में लगा रहता है चाहे वह गृहस्थ है अथवा विरक्त है जबकि शास्त्रों में इसका खंडन किया गया है –

सत्यं दिशत्यर्थितमर्थितो नृणां नैवार्थदो यत्पुनरर्थिता यतः | स्वयं विधत्ते भजतामनिच्छतामिच्छापिधानं निजपादपल्लवम् || (श्रीमद्भागवतजी ५/१९/२७)

यह सत्य है कि जीव के द्वारा चाही हुई वस्तुएँ जैसे मान-प्रतिष्ठा आदि भगवान् उसे देते हैं किन्तु इन सब चीजों का भगवान् द्वारा देना वास्तविक देना नहीं है, इसे भगवान् का देना नहीं कहते हैं | सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति को हम लोग भगवान् की बहुत बड़ी कृपा समझते हैं जबकि यह भगवान् की कृपा नहीं है | भगवान् की वास्तविक देन तो यह है कि भक्त के मन में पुनः कोई कामना उत्पन्न न हो, इसलिए प्रभु उसके हृदय में अपने चरणकमलों को रख देते हैं, यह भगवान् की सबसे बड़ी देन है | अतः हम लोग जिन वस्तुओं की प्राप्ति को भगवान् की कृपा समझते हैं, यथार्थ में वह भगवान् की कृपा नहीं है | श्रीमद्भागवत में यहाँ तक कहा गया है –

"मुक्तिं ददाति कर्हिचित्स्म न भक्तियोगम् |" (श्रीमद्भागवतजी ५/६/१८)

भगवान् मुक्ति दे देते हैं परन्तु भक्ति नहीं देते हैं | किसी को अर्थ की प्राप्ति हो गयी, उसकी कामनापूर्ति हो गई किन्तु ये जितनी भी वस्तुएं हैं, इनकी प्राप्ति भगवान् की कृपा नहीं है |

..क्रमशः

भावमयी भक्ति

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'नाम-महिमा' (२४/५/२०१०) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी चंद्रमुखी जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे) - ब्रह्माजी ने गोपालजी के सामने अपनी स्तुति में कहा कि इससे अधिक मेरा और कोई सौभाग्य नहीं होगा कि इस ब्रजभूमि में मेरा जन्म हो जाये | अब इस भाव के आगे सब तर्क समाप्त हो गये | किसी ने कहा कि जन्म-मरण से तो मुमुक्षुजन मुक्ति पाना चाहते हैं | ब्रह्माजी बोले कि इन सब बातों को छोड़ो, ये तो बहुत निम्न स्तर के विचार हैं | जन्म कहाँ हो ? तो ब्रह्माजी ने कहा कि मैं चाहता हूँ कि ब्रज के किसी वन में कोई पेड़-पत्ता बन जाऊँ | जरा विचार करें कि जगत्पिता ब्रह्माजी, जो कि भगवान् के गुणावतार अर्थात् स्वयं भगवान् ही हैं, वे ऐसे भाव व्यक्त कर रहे हैं | वस्तुतः भाव-शक्ति को समझना ही कठिन है | जो भाव को समझ गया फिर उसे वेद-शास्त्र प्रतिपादित साधन को करने की कोई आवश्यकता नहीं है | ब्रह्माजी बोले कि मैं ब्रजवासियों की चरण-रज को मस्तक पर नहीं धारण करना चाहता अपितु उनकी चरण-रज में स्नान करना चाहता हूँ; ऐसा दिव्य उनका भाव है | भाव वाले की प्रत्येक क्रिया अलौकिक होती है | जैसे - मधुकरशाहजी ने गधे को साष्टांग दण्डवत किया | सांसारिक दृष्टि से तो यह पागलपन है, इसे कौन समझ सकता है | भावहीन व्यक्ति इसे कैसे समझ सकता है, वह तो हँसेगा, मजाक उड़ाएगा कि गधे को दंडवत प्रणाम किया जा रहा है | इसकी पूजा की जा रही है | ब्रज की स्त्रियों अथवा भक्त

स्त्रियों को साधारण स्त्री नहीं समझना चाहिए | प्राकृत भाव हटने पर दिव्य भाव उत्पन्न हो जाता है, हमारे मन में जो प्राकृत भाव बैठा है, वही असुर है | प्राकृत भाव हटाने के लिए ही सत्संग किया जाता है | श्रीबाबामहाराज के गुरुदेव श्रीप्रियाशरणमहाराजजी प्रायः कहा करते थे कि टाट का गीला फटा हुआ कपड़ा जमीन पर रख दो तो वह तुरंत गीली हो जाएगी और सूखा कपड़ा चाहे दस हजार रुपये मीटर का है, उसे रखने पर जमीन गीली नहीं होगी चाहे वह कपड़ा सुनहला ही क्यों न हो | इसी प्रकार यदि कोई साधु या भक्त अनपढ़ ही है किन्तु जिसके हृदय में भाव है, उसके पास बैठ जाओ तो हृदय में भाव उत्पन्न हो जायेगा परन्तु भावहीन विद्वान् के पास बैठने पर हृदय में भाव का उदय नहीं होगा, वह तो शुष्क तर्क, किन्तु-परन्तु, लेकिन-चूँकि, if-but, संशय आदि में ही फँसा रहता है | एक ही खम्बे से प्रह्लाद का भगवान् प्रकट हुआ और उसी खम्बे से हिरण्यकशिपु का काल प्रकट हुआ, यह क्या है, यह भावना के अनुसार प्राप्ति है, जबकि खम्बा एक ही था | महात्मा लोग कहते हैं –

"ब्रज गोपिन को देवी माने, ताको यमपुर नाहीं |"

अर्थात् ब्रजगोपियों को यदि स्त्री समझोगे तो भोगबुद्धि उत्पन्न हो जाएगी और यदि स्त्री न मानकर ऐसा भाव रखो कि ये सब श्रीजी का स्वरूप हैं तो भवसागर से पार हो जाओगे, यही भक्तिमय भाव है | भाव को सीखना जिसने जान लिया, उसको वास्तविक भजन करना आ गया | भाव यदि नहीं है तो ज्ञान-वैराग्य आदि सब बेकार हैं | ब्रह्माजी ने स्पष्ट कह दिया है कि किसी साधन वाले के पास भगवान् नहीं आयेंगे |

त्वं भावयोगपरिभावितहृत्सरोज आस्से
श्रुतेक्षितपथो ननु नाथ पुंसाम् |
यद्यद्धिया ते उरुगाय विभावयन्ति
तत्तद्वपुः प्रणयसे सदनुग्रहाय ॥ (श्रीमद्भागवतजी३/९/११)

ब्रह्माजी कहते हैं – हे प्रभो ! आप तो केवल भावयोग वाले हृदय में रहते हैं अन्यथा भावहीन हृदय में आप नहीं रहते हैं | इसका अभिप्राय यह है कि हजार साधन कर लो किन्तु हृदय में यदि भाव नहीं है तो क्या है, कुछ नहीं है | विद्वान् बन जाओ, महंत-मंडलेश्वर बन जाओ, विरक्तराज बन जाओ, जगद्गुरु बन जाओ या और भी दुनिया की बड़ी-बड़ी उपाधियाँ ले लो किन्तु भाव यदि नहीं है तो सब कुछ व्यर्थ है क्योंकि भगवान् तो केवल भावयोग से

परिभावित हृदय में ही रहते हैं और हम लोग भाव को ही नहीं सीख पाते हैं | क्यों नहीं सीख पाते, इसलिए नहीं सीख पाते क्योंकि हम राग-द्वेष के द्वंद्व में सदा पड़े रहते हैं, कभी राग होता है तो कभी द्वेष हो जाता है | भगवान् ने गीता में कहा है – **वीतरागभय क्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः | बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः ॥** (श्रीगीताजी ४/१०) मेरा भाव (कृष्ण-भाव) कब आयेगा ? जब राग, भय और क्रोध से मुक्त हो जाओगे, तब हृदय में मेरा भाव (श्रीभगवद्भाव) उत्पन्न होगा | अब हम जैसे लोग जगह-जगह राग करते हैं, द्वेष करते हैं तो भाव कहाँ से आ जायेगा ? प्राणी अपने राग-द्वेष को छोड़ नहीं पाता है | कुछ भी कह लो, कितना भी समझा लो किन्तु वह राग-द्वेष का त्याग नहीं कर पाता है और ऐसा होने पर भावोत्पत्ति नहीं हो सकती | चतुर व्यक्ति केवल भाव सीखता है | किसी के अंदर यदि भाव है तो हमें उसे पकड़ना चाहिए | अब कितने ही लोग ब्रज में वीर बाबा (श्रीराधारानी के अनन्य रसिक भक्त थे, जो पूज्य बाबाश्री से बहुत प्रेम करते व बाबामहाराज के नित्य सत्संग में रहकर उच्च स्वर में राधारानी का जयकारा लगाते रहते थे) को याद कर रहे हैं, उनकी स्मृति में कितने ही भंडारों का आयोजन किया गया तो इसका कारण केवल यही है कि उनके हृदय में भाव था | हम लोग तो ब्रज की स्त्रियों को साधारण स्त्री ही समझेंगे किन्तु वीर बाबा उन्हें ब्रज की दिव्य गोपियाँ मानते थे और इसी भाव से डभारा गाँव में भिक्षा माँगने जाते थे | लोग तो उनका मजाक उड़ाते हुए कहते थे – ओ बाबा ! गूजरियों के पास हो आया किन्तु श्रीबाबामहाराज ने कभी उनका उपहास नहीं किया क्योंकि बाबाश्री अच्छी तरह से जानते थे कि 'भाव का उत्पन्न हो जाना' भगवान् की बहुत बड़ी कृपा है, नहीं तो हर आदमी स्त्रियों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण रखता है | अरे, स्त्रियों को शक्तिरूपा समझो, उन्हें देवीरूपा समझो और ऐसा करते ही देखते जाओगे कि क्या चमत्कार होता है | राग, भय और क्रोध हटा दो तो शुद्ध भाव उत्पन्न हो जायेगा किन्तु ये विकार नहीं हटते हैं | यदि ये विकार हट जाएँ तो शुद्ध भाव की उत्पत्ति होती है और वह एक शक्ति है | वीर बाबा की रहनी अत्यधिक शुद्ध और नियमित थी | कबीरदासजी ने कहा है – "**रहनी रहै सो गुरु हमारा, हम रहनी के साथी** |" जिसके अंदर रहनी है, कबीरदासजी के अनुसार वही साधु है और यदि रहनी नहीं है तो वह साधु नहीं है | तुम्हारी रहनी क्या है ? रहनी आदर्श होनी चाहिए | प्रायः साधक में एक-सा भाव नहीं रहता, उसके ऊपर अच्छे संग और कुसंग का प्रभाव पड़ जाता है, यह भी सच्चाई है किन्तु इष्ट संभाल लेता है क्योंकि वह दयालु है | वीर बाबा अनपढ़ थे किन्तु उनमें भाव-शक्ति थी | लोग उनसे मानमन्दिर की साध्वियों की निंदा करते हुए कहते थे कि बाबा, तू वहाँ क्यों रहता है, वहाँ तो लड़कियाँ रहती हैं लेकिन उनका नियम था कि हर लड़की को तुलसी दिया करते थे, उनकी यह क्रिया भावयुक्त थी, इसलिए कोई भी निंदक उनको रोक नहीं पाया | राधारानी ब्रजयात्रा में चलते समय वह कीर्तन में नृत्य करने वाली साध्वियों (आराधिकाओं) को दौड़-दौड़कर पानी पिलाते थे | यह क्रिया भाव से युक्त है क्योंकि जहाँ भाव होता है, वहाँ सेवा अवश्य होती है | वीर बाबा के अतिरिक्त कोई अन्य साधु दौड़-दौड़कर लड़कियों को पानी नहीं पिला सकता, वह तो शर्मायेगा (लज्जा करेगा) कि अन्य साधु मेरी निंदा करेंगे | कई बार उनसे लोगों ने मानमन्दिर की निंदा किया किन्तु उनके ऊपर उस निंदा का असर नहीं पड़ा, क्योंकि पढ़े-लिखे न होने पर भी उनके अंदर विशुद्ध भाव था | मानमन्दिर की समस्त बालिकाओं के प्रति उनका यही भाव था कि ये सब श्रीजी हैं | वस्तुतः भाव एक ऐसी चीज है, जिसकी प्राप्ति केवल श्रीजी की कृपा से ही होती है | भाव ही पककर निष्ठा बन जाता है | भाव की श्रेणियाँ होती हैं | साधक का उत्थान और पतन दोनों ही होता है, वह कभी उठता है, कभी गिरता है | एक बार सती अनुसुइया ने अपने सतीत्व के बल पर ब्रह्मा, विष्णु और शिव को छोटे-छोटे शिशु बना दिया था; केवल भाव शक्ति के कारण वे इतनी ऊँचाई पर पहुँच गयी थीं | भाव-शक्ति के कारण मनुष्य भगवान् से बड़ा बन जाता है और स्वयं भगवान् उसका दास बन जाता है | भक्तमाल में संत माधवदासजी की कथा है कि संग्रहणी रोग से ग्रसित होने पर भगवान् ने उनका मल-मूत्र धोया; यह श्रीभगवान् की भाव-वश्यता है | ...क्रमशः

प्रेमयोग 'लीला-गान'

श्रीबाबा महाराज के 'श्रीराधासुधानिधि-सत्संग' (५/५/१९९८) से संग्रहीत
संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी गोपिका जी, मानमन्दिर, बरसाना

गतांक से आगे – श्रीकृष्ण ने नाकाबंदी कर दी (श्रीजी का रास्ता रोक दिया) और बोले कि यशोदा मैया द्वारा दिया गया मेरा कैसा सुंदर मणिजटित पीताम्बर था, मेरे उस पीताम्बर को कौन फेंक गया तथा मेरी मणिजटित वंशी को किसने ले लिया और मेरे द्वारा तोड़े गये सुंदर फूलों को किसने फेंक दिया, कौन है वह ? आज तक तो मैं ही चोरों का राजा होकर इस ब्रज में घूमता था, अब यह कौन नई किशोरी चोरी कर रही है, चोर बनकर इस वन में घूम रही है और मुझ महाचोरजारशिखामणि (चोरों के राजा) की भी वंशी को चुराकर जा रही है | इसकी सुंदर किशोरावस्था है, यह कौन है ? जो पक्का चोर होता है, वह कड़क कर बोलता है, चुराया हुआ सब माल भीतर रखे रहता है किन्तु ऐसे बोलता है जैसे कोई शाह हो और जो नया चोर होता है,

वह घबराता है, उसकी आँखें झपने लग जाती हैं, ऐसा ही श्रीजी का हाल हुआ क्योंकि उनकी चोरी की ट्रेनिंग अभी पूरी नहीं हुई थी किन्तु श्रीकृष्ण की बात अलग है क्योंकि वह तो नित्य के अभ्यासी हैं | इसलिए श्रीकृष्ण द्वारा कड़ाई से बोलने पर श्रीजी घबराकर खड़ी हो गयीं | श्रीजी खड़ी हो गयीं तो श्यामसुन्दर मुस्कुराने लगे और समझ गये कि यह चोर अभी कच्चा है, इसलिए मेरा माल बहुत जल्दी बरामद हो जायेगा | जो पक्के चोर होते हैं, उन्हें पुलिस वाले अच्छी तरह पिटाई करके बहुत कठोर यातनाएं देते हैं, फिर भी वे अपनी चोरी को स्वीकार नहीं करते हैं, चुराए माल के बारे में कुछ नहीं बताते और जो कच्चे चोर होते हैं, वे बेचारे तो दो-चार डंडे में ही घबरा जाते हैं | श्यामसुन्दर जब समझ गये कि यह कच्चा चोर है तो उन्होंने आगे बढ़कर श्रीजी का आँचल पकड़ लिया क्योंकि उन्हें पता लग गया था कि इस अंचल के भीतर ही वंशी छिपी है | उधर खूँटैल सखियाँ तो दूर थीं, अब ऐसी स्थिति में वे क्या कर सकती थीं क्योंकि चोरी का मामला तो बीच में ही पकड़ा गया | श्यामसुन्दर द्वारा अंचल पकड़ने पर श्रीजी ने कहा – **मुंचममांचलमिति बहु चंचल लोचन कमल विभंगम्.....**| अरे,तुम कौन हो जो मेरा अंचल पकड़ते हो ? तुम बहुत चंचल हो, तुम्हारे नेत्र तो कमल की तरह हैं किन्तु तुम्हारी नीयत अच्छी दिखाई नहीं पड़ती | तुम जिस दृष्टि से नायिकाओं के अंचल को पकड़ा करते हो, वह गलत है | लाड़लीजी का अंचल बहुत सुंदर है, जिसके बारे में कहा गया है – **दुकूलमतिकोमलं कलयते.....**| श्रीजी का दुकूल (अंचल) अति कोमल है, वह दिव्य वस्त्र है, किस वर्ण का है ? कसूम्भी (लाल) रंग की उनकी चूनरी है | कुसुम्भ का आशय है - सुहावना लाल | 'कुसुम्भ' शब्द का अर्थ होता है – '**कौसुम्भते इति कुसुम्भः**' 'कौ' जो पृथ्वी पर, 'सुम्भते' सबसे ज्यादा शोभित होता है अर्थात् ऐसा सर्वाधिक सुशोभनीय लाल रंग | श्रीजी की फरिया अत्यंत कोमल है, कौसम्भी रंग की है, उनका श्रृंगार अत्यंत सुंदर है | राधारानी की अति मनमोहिनी छटा है, उनके काले घुंघराले केशों में गुँथे हुए सफेद बेला के पुष्प ऐसे खिल रहे हैं जैसे काली रात में तारे चमकते हैं | "**निबद्ध मधुमल्लिकाः**" – बहुत-सी बेला की मालाएँ श्रीजी के जूड़े में लटक रही हैं और "**बृहत्कटितटस्फुरन् मुखरमेखलालंकृतम्**" – जब आप चलती हैं तो मणियों की किंकिणी इस तरह से ध्वनि करती है कि उसकी ध्वनि दूर तक सुनाई पड़ती है, उसको 'मुखर' कहते हैं जैसे कोई बोल रही हो | श्रीजी की किंकिणी के बारे में यहाँ तक कहा जाता है कि जैसे बहुत से हंस इकट्ठे होकर कलरव करें | हंस जब कलरव करते हैं तो बहुत अच्छा लगता है |

श्रीराधाकृपाकटाक्ष स्तोत्र में भी वर्णन आता है –

"अनेकमन्त्रनादमंजुनूपुरारवस्खलत् |
समाजराजहंसवंशनिक्वणातिगौरवे ||"

राधारानी के नूपुरों से अनेक दिव्य मन्त्रों की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ती है और वे मन्त्र बड़े मीठे ढंग से निकलते हैं | हम लोग कोई मन्त्र बोलेंगे भी तो हमारा कड़वा मुख होने के कारण उस मन्त्र में भी कर्कशता आ जाएगी किन्तु राधारानी की किंकिणी ऐसी है जैसे बहुत से राजहंस कूजते हैं, इस प्रकार उनकी किंकिणी बोलती रहती हैं –

"विलोलहेमवल्लरीविडम्बिचारुचंक्रमे"

विलोल - चंचल, हेमवल्लरी - सोने की लता, जिस प्रकार सोने की लता हवा का झखोरा खाकर चले, ऐसी श्रीजी की गति है |

"कदा करिष्यसीहमां कृपा कटाक्ष भाजनम् ||"

श्रीजी का समस्त श्रृंगार बहुत उत्तम है किन्तु ऐसा लिखा है कि सर्वोत्तम शोभा हो रही है उनकी चुनरी की | **"दुकूलमतिकोमलं कलयरेव" –** 'एव' लगा दिया अर्थात् एक चुनरी सबको दाब रही है |

"निबद्धमधुमल्लिकाः ललितमाल्यधम्मिल्लकम् | बृहत्कटितटस्फुरनमुखर मेखलालंकृतम् ||"

श्यामसुन्दर ने श्रीजी का अंचल पकड़ा और उनकी शोभा देख रहे हैं | कैसी शोभा है ? **"स्फुरनमेखलालंकृतम्" –** मधुरातिमधुर शब्द स्वरित हो रहे हैं | श्रीजी की फरिया का संस्पर्श पाकर श्रीकृष्ण धन्यातिधन्य हो जाते हैं | इन लीलाओं में मन लगाने से अतिशीघ्र श्रीकृष्ण की प्राप्ति हो जाती है, क्योंकि यही वह रस है, जिस प्रेमरस की प्राप्ति हेतु ब्रह्मा-शिवादि तरसते हैं और प्रेम एक ऐसी वस्तु है, जो प्रभु को पाने का सबसे सरल, सरस व सहज रास्ता है | वह अत्यधिक बड़भागी है, जिसके हृदय में प्रेम उत्पन्न हो जाता है | अन्य सभी साधन जैसे योगादि, यहाँ तक कि वैधी भक्ति भी 'प्रेम' जैसा चमत्कार नहीं दिखाती है | सबसे ऊँची बात यही है कि यदि श्रीकृष्ण-प्रेम हृदय में आ जाए तो समस्त पाप एक क्षण में समाप्त हो जाते हैं | इसलिए प्रीति होनी चाहिए और 'प्रीति' प्राप्त करने का सबसे अच्छा उपाय है भगवान् की लीलाओं का गान | यदि किसी का श्रीजी में प्रेम है तो उसके अनंत अपराध हों तो भी श्रीकृष्ण उधर झांकेंगे भी नहीं | इस सम्बन्ध में प्रेम की एक छोटी-सी कथा है - सभी लोग जानते हैं कि वेश्या बहुत ख़राब होती है | वह एक गंदी नाली की तरह होती है, जिसमें हर आदमी जाकर पेशाब कर देता है | वेश्या स्त्रियों में भी सबसे अधम मानी जाती है किन्तु उसके हृदय में भी यदि भगवान् के प्रति थोड़ा भी प्रेम उत्पन्न हो गया तो वह एक क्षण में सबसे आगे चली जाती है, जहाँ लाखों वर्षों से साधन करने वाले बड़े-बड़े योगी भी नहीं पहुँच पाते हैं | यह बात केवल बढ़ा-चढ़ा के नहीं कही जा रही है बल्कि वास्तव में ऐसा हुआ है | भक्तमाल में कृष्णदासजी की कथा है, उन्होंने अत्यंत लाड़-प्रेम से श्रीनाथजी की सेवा की | जो भी अच्छी से अच्छी वस्तु वह देखते थे, उसे श्रीनाथजी की सेवा में समर्पित कर देते थे, उनका ऐसा प्रेम था, उनकी सेवा की भक्तमाल में बहुत प्रशंसा की गयी है | ...क्रमशः

अगस्त २०१९

मानमन्दिर, बरसाना

सर्वात्मसमर्पित सेवक 'श्रीमामा-भांजे'

श्रीबाबामहाराज के एकादशी-सत्संग (७/८/२०१४) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- बालसाध्वी प्रतीक्षा जी,दीदीजी गुरुकुल छात्रा, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीबाबामहाराज एकादशी के सत्संग में उपस्थित बच्चों को कथा सुनाते हुए उनसे कहते हैं - श्रीबाबामहाराज के शब्दों में – "देखो, जहाँ तुम लोग बैठे हो, इस पर्वत का नाम है - ब्रह्माचल | इस पर्वत का नाम ब्रह्माचल इसलिए पड़ा क्योंकि ब्रह्माजी यहाँ पर्वत बने हैं | ब्रह्माजी के मस्तक पर चार गढ़ हैं - भानुगढ़, दानगढ़ , विलासगढ़ और मानगढ़ | भानुगढ़ तो वहाँ है, जहाँ श्रीजी का मन्दिर है | 'दानगढ़' जयपुर मन्दिर के पास है | तीसरा है - विलासगढ़ जो साँकरी खोर के ऊपर है | चौथा है मानगढ़, जहाँ श्रीजी ने मान किया था, इस प्रकार ये चार गढ़ हैं | ब्रह्माजी ने गोपियों की चरण रज प्राप्त करने के लिए ६० हजार वर्षों तक तपस्या किया था किन्तु वह रज नहीं मिली | **"षष्टि वर्ष सहस्त्राणि .....|"**

तब उन्होंने सतयुग के बाद पुनः तपस्या की क्योंकि भगवान् का अवतार होने वाला था तो सोचा कि इस बार भगवान् की चरण रज अवश्य मिलेगी |

"पुराकृतयुगस्यान्ते ब्रह्मणा प्रार्थितो हरिः |"

उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान् प्रकट हुए और पूछा - क्या माँगते हो ? ब्रह्माजी बोले –

"ममोपरि सदा त्वंहि रासक्रीडां करिष्यसि |"

मैं आपकी रासलीला का दर्शन करना चाहता हूँ | भगवान् बोले कि वहाँ तो पुरुष का प्रवेश नहीं हैं फिर उनको दया आई और बोले – जाओ, ब्रज में पर्वत बन जाओ |

"पर्वतो भवसि त्वं हि मम क्रीडां च पश्यसि |"

पर्वत बनने पर तुम्हें हमारी लीला दिखाई पड़ेगी |

"यस्माद् ब्रह्मा पर्वतोऽभूद् वृषभानुपुरे स्थितः |"

(ब्रजभक्तिविलास)

तब ब्रह्माजी आए और वृषभानुपुर अर्थात् बरसाने में पर्वत बन गए | इसीलिए इस पर्वत का नाम है - ब्रह्माचल | प्रलय के अंत में भगवान् ने ब्रह्माजी को आज्ञा दिया था कि तुम सृष्टि बनाओ | ब्रह्माजी ने कहा – महाराज ! ये तो बड़ा लम्बा चक्कर है - सृष्टि बनाना, जैसे - बच्चा बनाना तो खेल है लेकिन उसका पालन करना बहुत कठिन होता है, उसी प्रकार मैं सृष्टि बनाऊँगा तो उसमें आसक्त हो जाऊँगा | भगवान् बोले कि मेरे वरदान से तुमको आसक्ति नहीं व्यापेगी | भगवान् ने ब्रह्माजी को एक प्रणवाकार, (ॐ) ओमकार जैसा विमान दिया और उस विमान में भगवान् का चतुर्भुज विग्रह था, उसका नाम था – 'रंगनाथ' | श्रीकृष्ण के २ रूप हैं - दो भुजा और चार भुजा वाले | दो भुजा वाला रूप तो ब्रज में है और चार भुजा वाला रूप द्वारिका तथा वैकुण्ठ में है | भगवान् विष्णु 'कृष्ण' के ही रूप हैं | चतुर्भुज रूप से भगवान् द्वारिका व वैकुण्ठ में रहते हैं और ब्रज में दो भुजा रूप से रहते हैं | भगवान् ने ब्रह्माजी को जो विमान दिया, उस विमान में रंगनाथ भगवान् की चार भुजा वाली मूर्ति थी | 'चार भुजा' माने ऐश्वर्य और 'दो भुजा' का तात्पर्य माधुर्य | 'ऐश्वर्य' अर्थात् बड़प्पन और 'माधुर्य' अर्थात् मीठी लीला | भगवान् ने रंगनाथजी की मूर्ति ब्रह्माजी को प्रदान की और फिर वे उस मूर्ति की सेवा करने लगे | भगवान् की सेवा से उनको माया नहीं व्यापी और वे सृष्टि में आसक्त नहीं हुए | इस प्रकार सृष्टि चलती रही, देवता बने, सूर्य-चन्द्रमा आदि बने | सूर्य के १० पुत्र थे, उसमें सबसे बड़े थे - इक्ष्वाकु | इक्ष्वाकु से ब्रह्माजी ने कहा कि तुम नीचे जाओ और पृथ्वी का शासन करो | इसी वंश में आगे रामजी हुए हैं, सूर्यवंश में उत्पन्न होने के कारण ही यह वंश 'सूर्यवंश' कहलाया | पृथ्वी का शासन करने के पूर्व इक्ष्वाकु ने तपस्या की और ब्रह्माजी से उनको भगवान् द्वारा प्रदान किया गया विमान और मूर्ति माँग ली | इक्ष्वाकु जी ने ब्रह्माजी से कहा कि आप मुझको भगवान् की वह मूर्ति दीजिये जिसकी आप सेवा करते हैं, तभी मैं पृथ्वी का पालन कर सकूँगा क्योंकि बिना भक्ति के शक्ति नहीं है | भक्ति एक ऐसी शक्ति है जो भगवान् को भी वश में कर लेती है | इसलिए जो भक्ति करता है, उसमें शक्ति

आती है | इक्ष्वाकु ने ब्रह्माजी से रंगनाथ भगवान् को माँग लिया और सदा उनकी सेवा करते रहे, उनके बाद उनके वंश में जितने भी लड़के हुए, वे सभी राजा बने और उन सबकी यही विशेषता थी कि सूर्यवंश में सभी लोग रंगनाथ भगवान् की सेवा करते रहे | आगे चलकर इसी वंश में रामजी का अवतार हुआ | भगवान् राम जब प्रकट हुए तो उनको भी रंगनाथ भगवान् की वह मूर्ति प्राप्त हुई जिसकी सेवा उनके पूर्वज लोग करते आ रहे थे | रामजी ने रावण का जब वध कर दिया तब वे अयोध्या लौट गये, उनके साथ विभीषण, सुग्रीव,जाम्बवन्त और सभी वानर-भालू भी अयोध्या गये | अयोध्या में रामजी का राज्याभिषेक हुआ, उसके पश्चात् सब लोगों को भगवान् ने विदा किया | विभीषण, सुग्रीव तथा दुनिया भर से आये सभी वानरों को प्रभु ने अपने-अपने स्थानों पर भेज दिया तथा उनसे कहा कि अब रावण मर चुका है, अतः अब आप लोगों की सेवा की आवश्यकता नहीं है | जब विभीषण जाने लगे तो रामजी ने उनसे कहा कि तुम हमारे सखा हो, अब लंका में रावण की जगह तुम राजा बनो | विभीषण ने कहा – महाराज ! अब मैं उस सिंहासन पर बैठूँगा, जिस पर रावण बैठा था, तो मेरे ऊपर भी कहीं माया का प्रभाव न हो जाए, इसलिए मैं आपसे कुछ माँगता हूँ| प्रभु बोले – "क्या माँगते हो, तुम जो माँगोगे मैं तुमको दूँगा |" विभीषण ने कहा – "आपके वंश में जिन चतुर्भुज भगवान् रंगनाथ की पूजा चली आ रही है, उन्हें आप मुझे दे दीजिए, फिर मुझको कोई माया नहीं व्यापेगी, अन्यथा रावण के सिंहासन पर बैठने पर मेरे भाव आसुरी हो सकते हैं |" विभीषण के माँगने पर रामजी ने रंगनाथजी की मूर्ति उनको दे दी | विभीषण उस मूर्ति को लेके चले और दक्षिण भारत में स्थित कावेरी नदी के तट पर पहुँचे, वहाँ उनको लघुशंका लगी तो मूर्ति को वहाँ रखना पड़ा | लघुशंका करने के बाद जब उन्होंने मूर्ति को उठाया तो वह अपनी जगह से नहीं हिली | अब विभीषण क्या कर सकते थे, भगवान् की यही इच्छा थी कि यह मूर्ति भारत में ही रहे | भगवान् के अवतार भारत में ही हुआ करते हैं, हमारा देश इसीलिए संसार का गुरु है | सारे संसार को ज्ञान, भक्ति और आचरण का प्रकाश भारत से ही मिला है | अस्तु, विभीषण ने कावेरी के किनारे रंगनाथजी के विग्रह की स्थापना की और फिर लंका चले गये | भगवान् रंगनाथ जी ने उनसे कहा कि तुम लंका से यहीं आकर मेरे दर्शन कर लिया करना | लंका वहाँ से निकट है | जब तक विभीषणजी का राज्य रहा, वह रोज आते थे रंगनाथ जी के दर्शन करने | रंगनाथ भगवान् कावेरी के किनारे स्थापित हैं |

भक्तमाल में २ भक्तों की कथा वर्णित है, इनमें से एक तो मामा था और दूसरा भांजा था, एक बार इन दोनों को वैराग्य का रंग चढ़ा और दोनों ही घर से निकल पड़े तथा भारत के सारे तीर्थो में भ्रमण करने लग गए | भारतवर्ष में बहुत से तीर्थ हैं | तीर्थ भ्रमण करते हुए जब ये दोनों भक्त कावेरी के तट पर पहुँचे तो देखा कि वहाँ श्रीरंगनाथजी का बड़ा सुन्दर विग्रह है लेकिन मन्दिर नहीं है | दोनों भक्तों ने विचार किया कि भगवान् का दिव्य विग्रह है और यह ब्रह्माजी से प्रथम सूर्यवंशी सम्राट इक्ष्वाकु को मिला था तथा इक्ष्वाकु से सेवित होता हुआ यह रामजी तक पहुँचा | भगवान् राम ने इसकी सेवा किया है, अतः इस श्रीविग्रह के लिए यहाँ मन्दिर बनना चाहिए | अब मन्दिर बनाने के लिए पैसा कहाँ से आवे ? ये दोनों तो साधु थे और थोड़े-से पैसे से मन्दिर तो बनता नहीं है | मन्दिर बनाने के लिए धन-संग्रह हेतु मामा और भाँजे ने पूरे देश में घूमना शुरू किया तो किसी स्थान पर जैनी लोगों का एक जैन-मन्दिर मिला | उस मन्दिर में जैनियों के देवता पारसनाथ की पारस-पत्थर की बनी एक मूर्ति थी | पारस एक ऐसा पत्थर है, जिससे लोहे को छुआ दो तो सोना बन जाता है | पारस-पत्थर आज भी है, वह भगवान् की कृपा से मिलता है | मानमन्दिर से जब ब्रजचौरासीकोस की यात्रा शुरू हुई थी तो एक बार पारस-पत्थर रास्ते में मिला था | उस यात्रा में जो भी ब्रजयात्री थे, उन सबने इस घटना को देखा था - एक यात्री की चप्पल थी, उसमें लोहे की कील लगी थी, जब 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' बरसाना धाम में प्रवेश की, तो वह लोहे की कील 'स्वर्ण' की बन गई थी; ऐसा

होने पर यही अंदाज लगाया गया कि किसी स्थान पर इस कील से पारस का स्पर्श हुआ है, उस सोने की कील को सभी ने देखा | अतः ब्रजभूमि में आज भी पारस है और यह भगवान् की इच्छा से प्रकट होता है व छिप जाता है | अस्तु, जैनियों के मन्दिर में पारस-पत्थर की मूर्ति थी, वह जैनी लोगों के कब्जे में थी, उसे कोई छू नहीं सकता था, केवल दूर से ही लोग पारसनाथ की पूजा कर लेते थे | 'मामा-भाँजे' वहाँ पहुँचे और उन्होंने पारस-पत्थर की मूर्ति को देखा तो दोनों सोचने लग गए कि ये मूर्ति हमें मिल जाए तो इससे चाहे जितना सोना प्राप्त करके हम रंगनाथजी का मन्दिर बना लेंगे किन्तु उन्होंने देखा कि जहाँ वह मूर्ति है, उस स्थान पर तो कोई घुस ही नहीं सकता है | इसलिए उस मूर्ति को प्राप्त करने के लिए जैनियों का विश्वासपात्र बनने हेतु वे दोनों हिन्दू-धर्म त्याग कर जैनी बन गए, जैनधर्म में शिष्यत्व ग्रहण कर लिया और ऐसी सेवा किया जो आज तक किसी ने नहीं की थी; सब जैनी लोग इनसे बहुत प्रसन्न हो गए | प्रसन्न होने के बाद जब जैनियों का 'मामा-भाँजे' पर दृढ़ विश्वास हो गया तब उन्होंने ('मामा-भाँजे' ने) उस कारीगर से भेंट की जिसने उस मन्दिर को बनाया था और उससे कहा कि तुमने मन्दिर तो बहुत बढ़िया बनाया है, जहाँ पारसनाथजी की मूर्ति है, उस स्थान पर कोई प्रवेश नहीं कर सकता लेकिन मान लो यदि कभी उस मूर्ति पर संकट पड़े तो क्या उस स्थान पर प्रवेश करने का कोई रास्ता है ? कारीगरों ने कहा – "हाँ, एक रास्ता है उस स्थान पर प्रवेश करने का, तुम लोग पक्के जैनी हो, इसलिए हम तुमको बता रहे हैं किन्तु किसी को बताना नहीं | इस मन्दिर की शिखर पर एक चक्र है, उस चक्र को घुमाते जाओ तो कोई हिम्मती आदमी पारसनाथ की मूर्ति के पास पहुँच सकता है |" इस रहस्य का पता लगने पर दोनों मामा-भाँजे बड़े खुश हुए और एक दिन रात में मन्दिर के शिखर पर जाके चक्र को घुमाया | मामा बड़ा था, भांजा छोटा था | मामा ने कहा – "भाँजे ! मैं इस मन्दिर के भीतर घुसता हूँ और मूर्ति को फाँस दूँगा, तुम उसे ऊपर खींच लेना फिर उससे प्राप्त धन के द्वारा हमारा मन्दिर बन जायेगा |" जाड़े की रात थी, सब दुनिया सो रही थी | मामा-भाँजे ऊपर चक्र पर चढ़े और उसे घुमाया तो उसमें छेद निकला | उसमें रस्सी बाँधके मामा मूर्ति के पास नीचे उतरा | ठीक नीचे तक वह उतर गया और फिर उस रस्सी में पारसनाथ की मूर्ति को फाँस दिया तथा भांजे को इशारा किया कि मूर्ति को खींच ले | मूर्ति खींच करके भाँजे ने उसे ऊपर निकाल लिया | अब मामा रस्सी को पकड़ करके ऊपर चढ़ने लगे लेकिन होनहार की बात थी कि पारस की मूर्ति को प्राप्त करने के कारण वह आनंद से इतने फूल गए कि मोटे हो गए | जब मोटे हो गए तो छेद से निकल नहीं पाए और चक्र में फँस गए | ऐसी स्थिति में मामाजी बोले – "भांजे ! तू मेरा सिर काट ले क्योंकि अब थोड़ी देर में सबेरा होगा तो जैनी लोग हमें पकड़ लेंगे और जरूर हमको मारेंगे | मैं इनके हाथ से मरना नहीं चाहता हूँ, तू भक्त है अतः मेरा सिर काट ले और इस मूर्ति को लेके चला जा तथा रंगनाथ भगवान् का मन्दिर बनवाना, जैसा हमने सोचा था |" मामा की बात सुनकर भांजा रोने लग गया और बोला – "मामा ! तुमको छोड़ के मैं कैसे जाऊँ और तुम्हारा सिर कैसे काटूँ ?" मामा बोला – "अरे, ऐसा करने पर मन्दिर बनेगा और ठाकुरजी सुख पावेंगे | इसलिए रो मत, जल्दी चला जा नहीं तो सबेरा हो जाएगा **सुख पावेगो मेरो नाथ भाँजे मत रोवे ||**

एक मंदिर बनाओ जाय ..... भांजे मत रोवे |

भांजा इसलिए रो रहा है क्योंकि उसे मामा का सिर काटना पड़ेगा, ऐसी स्थिति में वह क्यों नहीं रोयेगा | दोनों मामा-भांजे भक्त थे लेकिन मामा ने अपना सिर काटने को इसलिए कहा कि थोड़ी देर में जैनी लोग आयेंगे तो पकड़ लेंगे | मामाजी बोले –

"यह जीवन दिन चार को देह ये जावेगो |"

अरे ! भाँजे एक दिन हम सब मरेंगे | हम भगवान् के लिए मर रहे हैं, ये तो अच्छी बात है | यह जीवन .....ये शरीर तो पानी का बबूला है, बबूला थोड़ी देर में फट जाता है | हम सबको एक दिन मरना है |

"ये जल को एक बबूलो एक दिना फूटेगो |"

मामा ने कहा कि एक दिन सब मरेंगे लेकिन शरीर तो वही बढ़िया है जो भगवान् की सेवा में लग जाए |

प्रभु सेवा में लग जाए, भाँजे मत रोवे |
सुख पावेगो ..... अरे रो मत, जल्दी जा |
एक मन्दिर बनाओ जाए, भाँजे मत रोवे ||

मामा ने कहा - भाँजे, जाने कितनी बार हम लोग मरे-जिए **"अनगिनत बार मैंने देह धरा |"** जाने कितनी बार हमलोग पैदा हुए | **"अनगिनत बार मैं जला-मरा"** जब मनुष्य मर जाता है तो उसको जलाया जाता है | जाने कितनी बार हमलोग संसार में जले और मरे, इसलिए इस बार शरीर भगवान् की सेवा में लग जाए |

अबकी सफल हो जाए , भाँजे मत रोवे |
एक मन्दिर बनाओ जाय .....||

भांजा बोला – "मामा ! मैं कैसे तुम्हारा सिर काटूँ ?"

मामा बोला - **"तू सिर काट मती देर कर"**

अरे ! देर मत कर, सबेरा होते ही सब जैनी आ जाएँगे |

"मोपै तू इतनी कृपा करै"

ये जैनी लोग तो यहाँ आकर मुझे मार ही डालेंगे | मैं चाहता हूँ कि मेरे प्रभु का मन्दिर बन जाए | इसलिए तू यहाँ से जल्दी चला जा, भाग जा |

देखो, भोग तो कुत्ता-बिल्ली भी भोगते हैं, सुअर-सुअरिया भी भोग भोगते हैं, उत्तम शरीर तो वही है, जो भगवान् की सेवा में लग जाए | इस शरीर से कीर्तन करना चाहिए , नाचना चाहिए, भगवान् की भक्ति करना चाहिए, इस शरीर से आराधना करनी चाहिए तब तो ठीक है, नहीं तो कुत्ता-बिल्ली की तरह हम लोग हैं |

"ये देही अमर हो जाए भाँजे मत रोवे |"

भांजा बोला –

"कैसे सिर काटूँ हाय, हाथ नहीं काटेगो |"

मामा ! मेरे हाथ काटने के लिए नहीं चल रहे हैं, मैं कैसे सिर काटूँ | **"कैसी कठिन परीक्षा हाय, पार कौन जावेगो |"**

यह परीक्षा बड़ी गहरी आ गई | सिर नहीं काटूँगा तो भी मामा मरेगा तथा मंदिर नहीं बन पायेगा और यदि सिर काटता हूँ तो भी मरेगा | सिर यदि नहीं काटता हूँ तो मामा का शरीर फँस गया है, निकल नहीं पावेगा | इसलिए भाँजे ने हिम्मत करके मामा का सिर काट दिया | एक हाथ से भाँजे ने मामा का सिर पकड़ा और एक हाथ से मूर्ति पकड़ी तथा वहाँ से भाग खड़ा हुआ | सबेरा होने पर सब जैनी लोग पारसनाथ भगवान् के दर्शन करने आए | मन्दिर खोला तो देखा कि वहाँ मूर्ति नहीं थी | सब लोग एक-दूसरे से पूछने लगे कि मूर्ति कहाँ गई और फिर मूर्ति की तलाश करने लग गए | किसी ने कहा – देखो, वो रस्सा लटक रहा है, इसके सहारे कोई ऊपर चढ़ा है और मूर्ति को ले गया है | सब लोग ऊपर चढ़ कर गये तो देखा कि धड़ लटका था और सिर काट कर कोई ले गया था | (सिर तो काटकर भाँजा ले गया था, उसने सोचा कि इसे किसी तीर्थ में पधरा देंगे |)

जैनियों ने कहा – "अरे, वह चोर तो भाग गया | चोर का सिर कोई काटकर ले गया, अब केवल धड़ है, इसका हम लोग यहाँ क्या करें ?" चारों ओर चोर की खोज करके जैनी लोग हताश होकर बैठ गए क्योंकि वह तो भाग गया था | उस समय भारतवर्ष में सब ओर जंगल थे, इसलिए भांजे का कोई पता ही नहीं लगा पाया कि वह कहाँ भाग गया ? भांजा उस मूर्ति को लेकर दक्षिण भारत में कावेरी नदी के तट पर गया, जहाँ रंगनाथजी विराजित थे | भांजा भागता-भागता जब वहाँ पहुँचा तो देखा कि एक बहुत बड़ा मंदिर बन रहा है | यह देखकर भांजा रोने लग गया और बोला कि अरे ! ये मंदिर कौन बनवा रहा है, इस मन्दिर को बनाने के लिए तो मैंने मामा का सिर काटकर हत्या की और अब इस मंदिर को कोई दूसरा बनवा रहा है, ये कैसा गड़बड़ हुआ ? फिर भांजे ने देखा कि वहाँ सैकड़ों कारीगर लोग काम कर रहे थे, उसने उनके पास जाकर पूछा – "अरे भाई कारीगरो ! तुम मंदिर कैसे बना रहे हो ? किसकी आज्ञा से यह मन्दिर बन रहा है |" कारीगर बोले – "उधर देखो, वहाँ खड़े हैं मन्दिर बनवाने वाले |" जब भांजा वहाँ पहुँचा तो देखा कि मामाजी खड़े थे और मजदूरों के द्वारा मन्दिर-निर्माण का कार्य करा रहे थे | भगवान् की कृपा से उनका धड़ तो जैनियों के मन्दिर में लटका था लेकिन यहाँ फिर से मन्दिर-निर्माण के लिए भगवान् ने शरीर दिया और भांजे के वहाँ पहुँचने के पहले ही मन्दिर बनना शुरू हो गया |

इस कथा से यह शिक्षा मिलती है कि जो मनुष्य भगवान् के लिए अपना शरीर अर्पित कर देता है, अपना सर्वस्व न्योछावर कर देता है, वह मरता नहीं है | धर्म की रक्षा के

लिए मनुष्य को अपना शरीर चढ़ा देना चाहिए, इसीलिए यह मामा-भाँजे की कथा मैंने तुमको सुनाई | (श्रीबाबामहाराज बच्चों से कहते हैं) तुम लोग रोज कहते हो – "ब्रज की सेवा कौन करेगा ? हम करेंगे, हम करेंगे |" - इसीलिए मैंने यह कथा सुनाई | ब्रज की सेवा व ब्रज की रक्षा के लिए हम सबको कुछ करना चाहिए | मानमन्दिर से ब्रज-सेवा के अनेकों कार्य हुए हैं और हो रहे हैं – जैसे - गह्वरवन की रक्षा की गई, पहले यह बिक गया था | ४ लाख रुपए में यहाँ के ग्राम-प्रधानों ने इसे बेच दिया था और इसकी रक्षा के लिए ४६ साल हमलोग लड़े, तब गह्वरवन बचा, हमलोग कोर्ट से स्टे (stay) लाए, तब इसका संरक्षण हुआ, नहीं तो आज गह्वरवन नष्ट हो जाता | जैसे राधाकुण्ड भी पहले आरिट वन था किन्तु अब वहाँ एक भी पेड़ नही है, बस्ती बन गई है, वैसे ही गह्वरवन भी उजड़ जाता, इसका नाम-निशान भी नहीं रहता, यहाँ कोठियाँ बन जातीं परन्तु श्रीजी की कृपा का आश्रय लेकर संघर्ष करने पर इस गह्वरवन की रक्षा हुई | इसी तरह से मानमन्दिर यमुनाजी के लिए संघर्ष कर रहा है और ब्रज के अनेकों कुंडों, सरोवरों के जीर्णोद्धार के लिए संघर्ष कर रहा है | इस प्रकार ब्रज की लीलास्थलियों की रक्षा के लिए कई जगह लड़ाई चल रही है | मानमन्दिर चाहता है कि ब्रज की सेवा हो, ब्रज के पर्वतों, वनों और कुण्डों की रक्षा हो | तुमको पता नहीं है, तुम तो बच्चे हो, डायनामाइट नामक विस्फोटक पदार्थ, जो पर्वतों को काट देता है, उसके द्वारा पहले ब्रज के पर्वतों का समूल नाश किया जा रहा था और बड़े-बड़े अरबपति खन न माफि या, जिन को सरकार द्वारा ब्रज के पर्वतों का विनाश करने के लिए ठेके दिए गये थे | हम एक भी पैसा अपने पास नहीं रखते और फिर भी इन आसुरी विनाशकों के विरुद्ध लड़ते रहे और आज श्रीजी की कृपा से हम लोगों की विजय हो गयी, सम्पूर्ण ब्रज के पर्वत सुरक्षित हो गये तथा अरबपति खनन माफिया पराजित हो गये | ये सब श्रीजी की कृपामयी 'निष्काम आराधना-शक्ति' से काम चल रहे हैं, जबकि हमारे पास एक भी पैसा नहीं है और फिर भी सब काम चल रहा है | यदि हमारी नीयत साफ़ होगी तो भगवान् कृपा करता है | पैसा न होने पर भी मानमन्दिर से निःशुल्क वार्षिक ब्रजयात्रा चलती है, उसमें करोड़ों रुपए खर्च हो जाते हैं क्योंकि हमारी नीयत साफ़ है, हम पैसा नहीं बचाते हैं, धन का संग्रह नहीं करते हैं तो किसी प्रकार की कोई कमी नहीं आती | मानमन्दिर के साधु, साध्वियाँ (आराधिकाएँ) और गुरुकुल के बालक-बालिकाओं को मिलाकर लगभग पाँच सौ लोगों का यहाँ आराम से भक्तिमय जीवन-यापन हो रहा है | बाहर से भी सैकड़ों अतिथिगण रस मन्दिर में प्रतिदिन भोजन करते हैं किन्तु कोई कमी नहीं है | (मनुष्य अपनी नीयत साफ़ नहीं रखता है, स्वार्थ के लिए हम लोग गलती करते हैं, पैसा अपने लिए बचाते हैं, इसलिए खर्च पूरा नहीं पड़ता है | मानमन्दिर में कितने भी लोग आ जाएँ, कभी कोई कमी नहीं होती | ब्रजयात्रा में प्रतिवर्ष पन्द्रह हजार से अधिक व्यक्ति आते हैं और सबको भगवान् भोजन देता है, सबको सब तरह की सुविधाएँ देता है | अगर तुम्हारा सेवा का पक्का भाव होगा तो सारे ब्रज की तुम लोग सच्ची सेवा कर सकते हो |

कदम वन झूलन आई श्यामा ||

फूलन सारी फूलन अँगिया,
वो तो फूलन लहँगा लाई श्यामा |
कदम के फूलन सज्यो हिंडोरा,
वो तो पटुरी कदम की लाई श्यामा |
कदम फूल की बनी कौंधनी,
कदम के बिछुवा लाई श्यामा |
कदमन कुंडल कदम की गूँठी,
वो तो फूलन गहने लाई श्यामा |
कुँवर कान्ह को संग बैठार्‌यो ,
वो तो फूल घटा सरसाई श्यामा ||

आई घटा कारी-कारी,
आओ श्याम मुरारी ||

आधी रात में बादर गरजै
बिजुरी चमकै भारी, आओ ....|
मोतिन झालर पचरंग पलका
ऊँची हमारी अटारी, आओ ....|
ठंडी ब्यार चलै पुरवैया
खूटी हमारी किवारी, आओ ....|
आस-पास नांय कोई बाखर
सब ते रहूँ मैं न्यारी, आओ ....|
कोयल कूँकै मोरा बोलै
झींगुर की झनकारी, आओ ....|

जय श्री राधे पूर्णतः निःशुल्क जय श्री राधे

मान मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट
गहवरवन, बरसाना (मथुरा)
www.maanmandir.org

ब्रजरक्षा व गौरक्षा के पावन स्थल श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान, बरसाना द्वारा संचालित विशाल सीमा ब्रजयात्रा

श्रीराधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा : 2019

Website : Www.maanmandir.org, www.saveyamuna.org

व्यवस्था संबंधी जानकारी हेतु– 09927194000, 9927338666, 9837014602,
अपने परिवार जनों से बात करने के लिए– 09837564488, 700665000, 9927396085, 9837364488

क्र.सं.	दिनाँक	दिन	तिथि	पड़ाव	दर्शनीय स्थल	कि.मी.
1	11.10.2019	शुक्रवार	त्रयोदशी	बरसाना	(संकल्प प्रातः यात्रा पांडाल) मानगढ़, कुशलबिहारी मन्दिर, श्रीजी मन्दिर, दानगढ़, मयूरकुटी, सांकरी खोर, विलासगढ़, महेश्वरी सर, मानपुर पड़ाव	8
2	12.10.2019	शनिवार	चतुर्दशी	बरसाना	ऊंचागाँव 2km, सोनोखर 1km, ब्रजेश्वर 3km, रावणवन, पाडरवन 1km, भानोखर 3km, चित्रासखी, चिकसौली, दोहनी कुण्ड, श्रीमाताजी गौशाला, पड़ाव	13.5
3	13.10.2019	रविवार	शरद पूर्णिमा	नन्दगाँव	प्रिया कुण्ड 1.5km, अलिकिशोरी समाधि 0.5km, श्रीराधागोविन्द मन्दिर 0.5km, प्रेमसरोवर 0.5km, संकेत 2km, दोमीलवन 1km, उद्धव क्यारी 1km, हाऊ–बिलाऊ, नन्दभवन 3km, पड़ाव 1km	11
4	14.10.2019	सोमवार	प्रतिपदा	नन्दगाँव	पावन सरोवर, मोती कुण्ड, मयूर कुण्ड, टेरकदम, आसेश्वर, कृष्णकुण्ड, यशोदा कुण्ड, नंदबाग, चरणपहाड़ी, पनिहारी कुण्ड, पड़ाव	11
5	15.10.2019	मंगलवार	द्वितीया	सतवास	वृन्दादेवी 1.5km, लोहरवारी 2.8km, भड़ोखर 2.3km, मेहराना 2.5km, कनवाड़ी 3km, सतवास 3km, पड़ाव 1km,	16.1
6	16.10.2019	बुधवार	तृतीया	जुरहरा	भट्टकी 0.5km, बादीपुर 2km, गौशाला, सोनोखर 5km, पाई 2km, जुरहरा 4km	13.5
7	17.10.2019	गुरुवार	तृतीया	पुनहाना	हरियाणा बॉर्डर 3.5km, पुनहाना 8km	11.5
8	18.10.2019	शुक्रवार	चतुर्थी	बिछौर	श्रृंगार 5km, बिछौर 6km	11
9	19.10.2019	शनिवार	पंचमी	बामनारी	इंदाना 4km, अंधोप 4km, अली ब्राह्मण 3km	11
10	20.10.2019	रविवार	षष्ठी	मर्रौली	नागल 2km, सेबरी 5km, मुड़कटी 3km, मर्रौली 4km	14
11	21.10.2019	सोमवार	सप्तमी	महरौली / यमुना जी	खामी 3km, लीखी 6km, हसनपुर 3km, महरौली 3km	15
12	22.10.2019	मंगलवार	अष्टमी / नवमी	जैदपुरा	यमुना जी 2km, मालव 3km, जैदपुरा 4km, पड़ाव	9
13	23.10.2019	बुधवार	दशमी	बाजना	मानागढ़ी 2km, बाघई 5.5km, भूतगढ़ी 1km, बाजना 3km, पड़ाव	11.5
14	24.10.2019	गुरुवार	एकादशी	पिथौरा	पारसौली 3km, सालका 2.5km, बरौठ 2km, पिथौरा 5km, पड़ाव	12.5
15	25.10.2019	शुक्रवार	द्वादशी	टैंटीगाँव	मीरपुर 2km, सुल्तानपुर 2.5km, सप्तऋषि 1.5km, सुरीर 0.5km, टैंटीगाँव 5km, नगलाभूपसिंह 1.5km, पड़ाव	13
16	26.10.2019	शनिवार	त्रयोदशी	मांट	रामनगर 1km, बिजौली 1.5km, प्रेमनगर 1km, भाण्डीरवन 2km, बंशीवट 0.5km, मांट 4km	10
17	27.10.2019	रविवार	चतुर्दशी / दीपावली	वृन्दावन	नगलासुदामा 2km, गांगोली 1km, बेगमपुर 6km, जहाँगीरपुर 1km, बेलवन 1km, वृन्दावन पड़ाव 5km	16
18	28.10.2019	सोमवार	अमावश्या / अन्नकूट / गोवर्धन पूजन	वृन्दावन	परिक्रमा	14
19	29.10.2019	मंगलवार	यम द्वितीया / भइया दोज	वृन्दावन	मन्दिर दर्शन	10

20	30.10.2019	बुधवार	तृतीया	राया	पानीगाँव 4km, राधारानी मानसरोवर 3km, सौरगुद्दर 2km, केहरीगढ़ी 2.5km, नागल 2km, राया 1km, पड़ाव	14.5
21	31.10.2019	गुरुवार	चतुर्थी	कारव	सियारा 2.5km, हवेली 1.5km, कारव 4km, पड़ाव 1km	9
22	01.11.2019	शुक्रवार	पंचमी	दाऊजी	नगला लोका 2.5km, आनन्दी–बन्दी 2km, छौली 3km, दाऊजी दर्शन 3km, पड़ाव 1km	11.5
23	02.11.2019	शनिवार	षष्ठी	चिंताहरण	खड़ेरा 3km, हवेली 1km, बसई 2km, हरदसा 1km, ऋणमोचन 2km, चिंताहरण 2km	11
24	03.11.2019	रविवार	सप्तमी	रावल	ब्रह्माण्डघाट 0.5km,महावन चौरासीखम्भ 1.5km, रमणरेती 2km, रसखान समाधि 0.5km, गोप तलैया 0.5km, गोकुल 1km, चन्द्रावली 3.5km, राधारानी रावल पड़ाव 2km	11.5
25	04.11.2019	सोमवार	अष्टमी	बाद	चन्द्रावली 2km, गोकुल पुल 3.5km, श्रीहित हरिवंश आश्रम बाद 7km	12.5
26	05.11.2019	मंगलवार	नवमी	मनसादेवी	रिफाइनी गेट नं 9 3km, छरगाँव 2.5km, शेरशाह 2.5km, माल (मार्कण्डेयवन व ऋषि मन्दिर) 3.5km, सौनोठ 1.5km, मनसादेवी मन्दिर पड़ाव 1km	14
27	06.11.2019	बुधवार	नवमी	ताखा	गोपालपुर 0.5km, जाजमपट्टी 1.5km, रसूलपुर 1km, रारह 2km, ताखा 4km, पड़ाव	9
28	07.11.2019	गुरुवार	दशमी	सौंख	गुलशरा 6km, सौंख 3km, बाजार 1km, पड़ाव 1.5km	11.5
29	08.11.2019	शुक्रवार	एकादशी	पूंछरी	बछगाँव 3.5km, कोंथरा 7km, पूंछरी पड़ाव 2km	12.5
30	09.11.2019	शनिवार	द्वादशी	पूंछरी	गोवर्धन परिक्रमा	12
31	10.11.2019	रविवार	त्रयोदशी	ऊमरा	श्यामढाक 3.5km, सामई 3km, ऊमरा 3km, पड़ाव 0.5km	10
32	11.11.2019	सोमवार	चतुर्दशी	टाँकौली	अऊ 3km, कुचावटी 2.5km, डीग 5.5km, दुदावली 4km, टाँकौली 2km, पड़ाव	17
33	12.11.2019	मंगलवार	पूर्णिमा	खोह	गुहाना 2km, बूढेबद्री 2km, जड़खोर 2.5km, पहलवाड़ा 1.5km, खोह 3.5km	11.5
34	13.11.2019	बुधवार	प्रतिपदा	आदिबद्री	नीलघाटी, कदमखंडी, अलीपुर, हिरनखोई, देवसरोवर, गंगोत्री, यमुनोत्री, हर की पौड़ी, हरिद्वार, आदिबद्री	8.0
35	14.11.2019	गुरुवार	द्वितीया	केदारनाथ	अलीपुर 1km, पसोपा 3km, धाऊ–बरौली 2.5km, केदारनाथ 3.5km	10
36	15.11.2019	शुक्रवार	तृतीया	कामा	लैहसर 5km, चरणपहाड़ी 3km, लुक–लुक कुण्ड 2km, गया कुण्ड कामा 2.5km	12.5
37	16.11.2019	शनिवार	चतुर्थी	कामा	परिक्रमा व दर्शन	10
38	17.11.2019	रविवार	पंचमी	बरसाना	कनवाड़ा 2.5km, कदमखंडी 2.5km, सुनहरा 2.5km, बरसाना 2km, मानमन्दिर 2.5km	12

1. यात्रियों को दोनों समय भोजन एवं प्रातःकाल चाय औषधियाँ एवं आवास व्यवस्था पूर्णतः निःशुल्क है। 2. वाहन में यात्रा करने वाले एवं निजी टैण्ट की सुविधा वाले को शुल्क देय है। 3. यात्रा में ठाकुरजी के डोले के पीछे ही चलना होगा, आगे जाना निषेध है। 4. यात्रा पाण्डाल में धूम्रपान आदि करना निषेध है। बिस्तर, जमीन की सीलन को रोकने के लिए मोमजामा, टार्च एवं जाड़े के पकड़े भी लायें। 5. यात्रियों को अपने साथ थाली, लोटा, बाल्टी, कटोरी, गिलास लाना आवश्यक है। 6. परिस्थितिवश कार्यक्रम में परिवर्तन किया जा सकता है। 7. यात्राकाल में मौन रहें अथवा कीर्तन करें यही यात्रा का शुल्क है। 8. वृद्ध यात्री अपने साथ एक सहायक अवश्य लावें एवं **9. आधार कार्ड एवं पहचान पत्र अवश्य लायें।** 10. यात्रा में दान देने के इच्छुक यात्री किसी व्यक्ति को न देकर यात्रा कार्यालय में ही दान देकर रसीद प्राप्त करें अथवा गौलक में डालें।

विशेष सूचना

धाम सेवा के बिना यात्रा, यात्रा ही नहीं है। जो धाम सेवक है, वही सच्चा यात्री है। यमुना जी को फिर से धाम में लाना है, ये सच्ची धाम सेवा है। इसके लिए सभी यात्री यमुनाजी को धाम में लाने का संकल्प व प्रयत्न अवश्य करें।